तृतीय अध्याय

समाजशास्त्रीय निकष पर कमल कुमार के उपन्यास

कमल कुमार बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार हैं। उनका साहित्य समाज के सरोकारों से जुड़ा हुआ है। इसीलिये उनके साहित्य में समाज और अपने समय की जिन्दगी का प्रतिबिम्ब झलकता है। समाज में रहने वाले प्राणी अपने व्यवहार से एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। मनुष्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिये समाज में मानदण्ड बनाये गये हैं। कमल कुमार के कथा - साहित्य का समाजशास्त्रीय अध्ययन करने के लिये जो प्रतिमान निर्धारित किया गया है उसमें सामाजिक मानदण्डों का महत्वपूर्ण स्थान है। सर्वप्रथम उन सामाजिक मानदण्डों को समझना आवश्यक है, जो मनुष्य के व्यवहार को समाज के अनुकूल बनाने में सहायक बनते हैं। सामाजिक मानदण्डों में विश्व की कई सभ्यताओं में आधुनिकता से पूर्व सामाजिक अवसरों पर ग्रामीण स्त्रियों को रोने के लिये परिवार में बाध्य किया गया है। इससे बड़ा दिलचस्प यह है कि उन समाजों ने अपनी स्त्रियों के इस रूदन एवं उनकी सहनशक्ति की प्रशंसा भी की है तो क्या समाज में यह पूछा जा सकता है कि स्त्रियों ने रोने के माध्यम से अपने शिकायती अंदाज में संवाद भी किया होगा? जिसे भारत में बहुत कम देखा गया है। यहाँ स्त्री पुरूष के बीच सामाजिक सांस्कृतिक फांक को समझते हुये मुख्यतः तीन पहलुओं पर विचार किया जा सकता है— (1) विवाह या गवना समारोह में भेंट के वक्त आंसू बहाती स्त्रियों के रूदन संवाद को प्रतिरोध के रूप में देखा जाना चाहिये या परम्परा के अनुपालन के रूप में। (2) मौके बेमौके मुलाकात के वक्त भेंट करती स्त्रियों को भाव साथ के रूप में देखना चाहिये या कलात्मकता के संदर्भ में (3) मृत्यु पर शोक मनाती स्त्रियों के विलाप स्वर को चीख के रूप में

देखना चाहिये या करूण भाव की अभिव्यक्ति के रूप में? ये परिवार के रूप में भी जोड़ने का काम करती हैं जिससे परिवार या समाज के विविध व्यवहारों का पता चलता है। इन सभी का संदर्भ कमल कुमार के उपन्यासों में बखूबी देखा जा सकता है।

कमल कुमार के उपन्यासों में सामाजिक मानदण्ड का इतिहास सभ्यता के इतिहास की तरह ही प्राचीन है। सामाजिक व्यवहार को विनियम करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। इसके माध्यम से स्वीकृत और विकृत व्यवहार में अंतर किया जा सकता है। समाज विकृत व्यवहार को नियंत्रित करते हैं जिससे कि समाज की व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाया जा सके। सामाजिक एक नियम, मानक या कार्य का प्रतिरूप है । ये आचरण के वो नियम हैं जिससे व्यक्तियों के व्यवहार को आँका जाता है और स्वीकृत या अस्वीकृत की कोटि में रखा जाता है। समाज में मनुष्यों द्वारा समय-समय पर मानदण्डों का निर्माण किया जाता है। कुछ तो शताब्दियों तक समाज में बने रहते हैं जबकि फैशन और धुन ऐसे सामाजिक निकष हैं जो अल्पकालिक ही होते हैं। सम्पादक रामगणेश यादव ने लिखा है "समाज को बनाये रखने, बिना किसी बाधा के गतिशील रखने, समाज में शांति एवं व्यवस्था बनाये रखने, सभी के व्यवहारों में समानुरूपता लाने तथा समाज में एकता बनाये रखने के लिये जिन नियमों, विनियमों, अधिनियमों, प्रथागत कानून, पारित कानून, जनरीतियों, प्रथाओं, रूढ़ियों और फैशन तथा संस्थाओं की व्यवस्था है उसे सामाजिक प्रतिमान (Social norms) कहते है ।[1]

साहित्यकार कमल कुमार ने समाज में मनुष्यों के व्यवहार को नियंत्रित करने के लिये कानून एवं पुलिस प्रशासन, प्रथा, धर्म और संस्थाओं के अंतर्गत परिवार, राजनीति, शिक्षण एवं स्वास्थ्य संस्थाओं का उल्लेख किया है । लेखिका द्वारा जिन सामाजिक निकष को अपने कथा साहित्य में स्थान दिया गया है। उनके विघटित हो रहे स्वरूप का चित्रण आगे किया जायेगा ।

कमल कुमार ने कानून को आम व्यक्ति की पहुँच से दूर होने और कानून का उल्लंघन करते संगीन अपराधियों का यथार्थ चित्रण किया है जो कि आज हमारे समाज का सत्य है।

3.1. पारिवारिक समस्यायें

परिवार एवं उसका सामान्य स्वरूप मानव समाज की एक महत्वपूर्ण और कल्याणकारी संस्था है। सृष्टि के आदिकाल से आज तक इसकी अनिवार्यता सर्वत्र पाई जाती है। समाज का संरक्षण एवं संवर्धन परिवार पर अवलंबित है। मानव के विकास का इतिहास परिवार से जुड़ा हुआ है। इस संदर्भ में समाज शास्त्र के सुप्रसिद्ध विद्वान मैकवाइवर और पेज के अनुसार "परिवार उस समूह का नाम है जो यौन सम्बन्धों पर आश्रित है। और इतना छोटा और शक्तिशाली है जो सन्तान के उत्पादन और पालन-पोषण की व्यवस्था करता है।"[2]

पारिवारिक समस्या को लेकर कमल कुमार का साहित्य समसामयिक यथार्थ एवं आज के स्वार्थ सामाजिक ढांचे से सीधा टकराता है। उनके साहित्य में समाज का सत्य दुनिया के सामने लाने की क्षमता है। उनका साहित्य जीवंतता की मिसाल कायम करता है। उनके साहित्य का फलक विस्तृत है। जिसमें समाज का हर पक्ष समाहित है। उनके साहित्य में समाज में रहने वाले मनुष्य और उसके दूसरे मनुष्यों के साथ सम्बन्धों का जाल अत्यन्त कठिन है ये कमल कुमार के कथा-साहित्य में वर्णित है। उनके साहित्य में मिलने वाले सामाजिक मूल्यों को विभिन्न पक्षों के अंतर्गत पारिवारिक मूल्य, साहित्यिक मूल्य, सांस्कृतिक मूल्य के रूप में सम्मिलित किया गया है।

विवाह सम्बन्ध समाज द्वारा स्वीकृत होता है। इसके आधार पर पति-पत्नी के यौन संबंधों से जो सन्तान होती है उसे मिलाकर परिवार का निर्माण होता है। यह सम्बन्ध तब तक आजीवन बना रहता है जब तक बीच में विवाह-विच्छेद (तलाक) या मृत्यु के कारण टूट न

जाए। वंश व्यवस्था प्रत्येक परिवार में कोई वंश नाम निश्चित करने का एक नियम होता है जिसके अनुसार परिवार के बच्चों का उपनाम या वंशनाम निर्धारित होता है और उसके वंशजों को पहचानने में मदद मिलती है। यह वंशनाम वास्तविक रक्त सम्बन्धों पर आधारित होता है। सभ्य समाजों में यह पिता के नाम पर तथा जनजाति समाज में माता के नाम पर उपनाम होता है (जैसे-खारी, गौरा आदि जातियों में)।

प्रत्येक परिवार में कुछ न कुछ अर्थव्यवस्था जीवन - विवाह के लिये अनिवार्य होती है। यह व्यवस्था आवश्यक वस्तुओं को उपलब्ध कराती है। जिससे परिवार के सदस्यों का पालन-पोषण होता है। एक सामान्य परिवार या घर में पारिवारिक समस्यायें होती हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पति न तो पत्नी के घर रहता है न तो पत्नी पति के घर बल्कि वे दोनों ही एक नया घर बनाकर रहने लगते हैं। आधुनिक समय में प्रायः पति-पत्नी नया घर बनाकर या लेकर रहने लगते हैं। भारत में प्राचीन इतिहास में परिवार का सुलझा हुआ रूप वैदिक काल में दिखायी देता है। वैदिक परिवार में प्रायः तीन पीढ़ी तक के सदस्य सम्मिलित होते थे। यजुर्वेद के एक मंत्र में पिता, पितामह और प्रपितामह को नमस्कार करते हुये उनसे प्रार्थना की गई है कि वे अपने वंशज को शुद्ध करें | वैदिक परिवार में पितृ परम्परा से सम्बद्ध व्यक्ति ही रहते थे। एक परिवार में रहने वालों का मूल पूर्वज एक पुरूष होता था। समाजशास्त्रियों ने मानव समाज के परिवारों का जिन दो मुख्य भागों में विभाजन किया है वह है- पितृवंशी परिवार और मातृवंशी परिवार। इनमें मातृवंशी परिवार का वैदिक साहित्य में स्पष्ट वर्णन नहीं मिलता है। पितृवंशी परिवार की ही चर्चा अनेक स्थलों पर मिलती है। इस परिवार में स्वाभाविक अथवा कृत्रिम रूप से बनाये हुये वंशज परदादा, दादा या पिता के अनुशासन में रहते हैं। सामाजिक विधान चाहे कुल की हो किन्तु इस परिवार में मुखिया निरंकुश रूप से शासन करता है।

(क) उच्च मध्य परिवार की समस्यायें

आधुनिक युग में संयुक्त कुटुम्ब की प्रथा में विघटन की प्रवृत्ति प्रबल हो रही है। आजीविका के नये-नये साधन, यातायात की सुविधा, शहरीकरण, नारी-जागरण एवं जीवन संघर्ष की उग्रता जैसे- तत्वों ने संयुक्त परिवार को विघटित कर दिया है। पश्चिम की नई विचारधारा ने भी भारतीय संगठित परिवार पर गहरा प्रभाव डाला है। स्वतंत्रता और समानता के अधिकारों की घोषणा ने समष्टिवाद को व्यक्तिवाद का रूप दे दिया है । फलतः संयुक्त कौटुम्बिक स्वरूप एकाकी परिवार या लघु परिवार की संक्षिप्त सीमा में आबद्ध हो गया है।

विवेच्य युगीन कहानियों में उच्चमध्य परिवार की विभिन्न समस्याओं को आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में उठाया गया है । अंग्रेजी शिक्षा, स्वतंत्र चिन्तन, व्यक्तित्व प्रतिष्ठा, नारी-स्वतंत्रता और अभिजात्य के सवाल ने दाम्पत्य, जीविका और यौन सम्बंधी विविध समस्याओं को उत्पन्न कर दिया है। ये समस्यायें कहीं वर्ग वैषम्य के धरातल पर अवस्थित है तो कहीं युगबोध की संवेदना से परिचालित हैं। अतृप्त दाम्पत्य परिवार एवं सामाजिक नियम की परिवर्तित स्थितियों के कारण दाम्पत्य सम्बंध आज सबसे बड़ी समस्या के रूप में उपस्थित है। उच्चमध्य वर्ग की अनेक पति-पत्नियाँ अतृप्ति और घुटन की बीच जी रहे हैं। साथ रहते हुये भी वे अकेलापन महसूस करते हैं। शारीरिक सम्बन्धों के बावजूद उनमें काम की भूख और प्रेम की प्यास पाई जाती है। अधिक वेतन पाने वाले पति जिन पर जिम्मेदारियाँ भी अधिक होती हैं। अपने अफसरों अधिकारियों के अतिरिक्त समाज के दायित्वों से भी वह घिरा रहता है और बाहर की यह जिन्दगी उसे घर की समीपता से काट देती है। जिससे परिवर में समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं।

विवाह-विच्छेद, पश्चिमी प्रभाव और नव जागरण की चेतना के परिणाम स्वरूप तलाक और सम्बन्ध विच्छेद के कानून बनाये गये। तलाक का कारण है पति-पत्नी की असमान विचारधारा। अतृप्त सम्बन्धों में वर्गीय असमानता आड़े आती थी और तलाक में भी। यौन सम्बन्धों की अराजकता और कामगत स्थितियों के विभिन्न दृष्टिकोण, विवेच्ययुगीन अनेक उपन्यासों में दिखाई देती है। विवाहिता और अविवाहिता दोनों ही प्रकार की परिस्थितियों में यौन अराजकता के विभिन्न रूप पाये जाते हैं। आधुनिक उच्चमध्यवर्ग के परिवार के अन्तर्गत स्त्री-पुरूष संबन्धों का एक स्तर यह है जहाँ संयोग के शारीरिक सुख की तृप्ति के लिये वैवाहिक बचपन को चुनौती दी जाती है। परिवार की समस्यायें आत्मनिर्भर नारी भी होती हैं। आत्मनिर्भर और जीविकारत नारी के कारण पारिवारिक सम्बन्धों में व्यापक परिवर्तन आया है। वस्तुस्थिति यह है कि उच्च मध्य परिवार की नारी की जीविका ने उसकी वैयक्तिकता, दाम्पत्य और तमाम परिवार के सम्बन्धों से सम्बन्धित अनेक समस्यायें खड़ी कर दी हैं। लगता है युगों-युगों से शोषित और पीड़ित अबला अब इस युग में सबला बनकर पुरूष से बदला ले रही है।

पारिवारिक समस्या का कारण पश्चिमी सभ्यता का भी प्रभाव रहा है। जिससे परिवार में विघटन की समस्या उत्पन्न हो गयी है, वह है स्वतंत्रता एवं अंकुश रहित। इस प्रकार परिवार से सम्बन्धित समस्याओं पर दृष्टि डालने से यही स्पष्ट होता है कि आज के स्त्री-पुरूष बौद्धिक और भावात्मक दोनों ही स्तरों पर पुराने मूल्यों को नकार रहे हैं। नये मूल्यों की प्राण प्रतिष्ठा अभी नहीं हो पाई है और संक्रमण कालीन दौर से गुजरते हुये पति-पत्नी, माँ - बाप, भाई- बहन, सास-बहू, पिता-पुत्री आदि सभी सम्बन्ध नाना प्रश्न चिन्हों और जटिलताओं का सामना कर रहे हैं। एक समस्या से अनेक प्रश्न जुड़े हुये हैं और एक प्रश्न के अनेक उत्तर हैं पर अभी तक एक निश्चित उत्तर की तलाश जारी है।

(ख) मध्यमवर्गीय परिवारिक समस्याएँ

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात बदलते हुये परिवेश में मध्य मध्यम वर्ग के परिवार को सबसे अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है, उच्च मध्यम वर्ग के लोग आर्थिक सुविधा के कारण समाज में सुरक्षित रहते हैं। अतः वे संघर्ष से भी बहुत दूर रहते हैं। निम्न मध्यवर्ग और निम्न वर्ग के सदस्य भाग्यवाद, रूढ़ियों और एक निश्चित जीवन के आधार पर जीते हैं इसलिये एक प्रकार की निश्चितता उनमें पाई जाती है। सबसे अधिक समस्याग्रस्त जीवन मध्यमवर्गीय परिवार का होता है । यह परिवार येन-केन-प्रकारेण अपनी मर्यादा का निर्वाह करते हुये नाना प्रकार के व्यंग्य, विघ्न और उपेक्षाओं को सहता है। अपनी स्थिति और क्षमता को बड़ा-चढ़ाकर दिखाने के कारण इस परिवार के लोग खोखला जीवन बिताते हैं । अभिजात्य वर्ग के निकट पहुंचने की ललक के कारण इन्हें सारहीन बिडम्बनापूर्ण परिस्थितियों के मध्य होकर गुजरना पड़ता है। कृत्रिम शान शौकत बनाने और समाज में ऊँचा दिखाई देने की आकांक्षा के कारण इस परिवार की आर्थिक दशा दुर्बलतर होती जाती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि अस्तित्वबोध की खोज में आज का मध्य मध्यमवर्गीय परिवार कुंठा, एकाकीपन की अवस्था, आक्रोश और निरूद्देश्यता जैसे मानसिक विकारों को फैला रहा है। अपने व्यक्तित्व को प्रतिष्ठित करने में यह सतत् संघर्ष कर रहा है। विवेच्य युगीन सामाजिक मध्यमध्यम वर्ग की छोटी-बड़ी सभी समस्याओं को किसी न किसी रूप में पकड़ने की कोशिश की है तथा उन्हें व्यक्तिगत और समाजिक दोनों ही रूपों में चित्रित किया है। मध्यमवर्गीय परिवारों में माँ-बाप, बेटे-बेटियाँ सास- बहू यहाँ तक कि पति-पत्नी संबंधों का अवमूल्यन और विघटन हो रहा है फिर एक नवयुवती विधवा की तो स्थिति ही अलग है। घर या बाहर उसे सहारा चाहिये । इसलिए किबाड़ भर रोशनी की जवान विधवा पति की मृत्यु के पश्चात् अनेक प्रश्नों से घिर जाती है। प्रेम सम्बन्ध भी उसे विश्वसनीय नहीं लगते और अलगाव

के कटु क्षणों के फैलते हुये भी वह घर से जुड़ना चाहती है। अविश्वास और अनिश्चय की द्वन्द्वात्मक पीड़ा को भोगने वाली यह नारी वैधव्य जनित विरोधाभास में जी रही है।

उपर्युक्त सन्दर्भ में देखे तो अनमेल विवाह भारतीय कहानी साहित्य की शताब्दियों से चली आ रही समस्या है। भारतीय मध्यम वर्गीय परिवार में आधुनिक जागरण के युग में अनेक ऐसी नारियाँ है जो बेमेल विवाह की पीड़ा में आजीवन घुटती रहती हैं। यद्यपि इस समस्या का मूल कारण मध्यमवर्ग में आर्थिक ही रहता है पर वैयक्तिक स्तर पर एक नवयुवती की मानसिकता से पाठक को सहानुभुति होती है। इसी तरह पारिवारिक समस्या में वैश्यावृत्ति एक हीन कर्म है जिसे स्त्री परिस्थितिवश ही अपनाती है। यदि नारी को पारिवारिक उदारता और सुचारू जीवन व्यतीत करने की सुविधा मिले तो वह कदापि इस नारकीय जीवन को स्वीकार नहीं करेगी। यौनचार काम अराजकता एवं सहज मानवी प्रक्रिया के रूप में यौन व्यवहार को हमने धर्म तक में बड़ा महत्व प्रदान किया है। हमारे भारतीय धर्म स्थानों तक में इस मानवी धर्म को स्वीकार किया गया है। यह जानने के लिये हमें फ्रायड के दर्शन की आवश्यकता नहीं होनी चाहिये कि जीवन में यौन बुभुक्षा का कितना बड़ा स्थान है। इसमें दो राय नहीं हो सकती कि उच्छल यौनाचार आज की युवा पीढ़ी का महत्तम अभिशाप है। इसका कारण मूलतः सामाजिक हैं। अतः यदि युगीन परिवार के पात्र यौन विकृति, यौन अनाहार अथवा काम की भूख से आक्रान्त हैं तो वे हमारी घृणा के नहीं सहानुभूति के पात्र हैं।

इस तरह बदलती हुई परिस्थितियाँ, शिक्षा और विषय आर्थिक स्थितियों ने नारी को परम्परा से विद्रोह और रूढ़ियों से मुक्त होने की शक्ति प्रदान की है। स्वतंत्रता के उपरांत चेतनाशील नारी गली-सड़ी मान्यताओं को मानने से इन्कार करती जा रही है। इस प्रकार की कई कहानियाँ हमारा ध्यान आकर्षित करती हैं। रूढ़ि संयुक्ति की ये नई दिशा और नई संभावनाओं का क्षितिज तैयार करती है। नौकरी पेशा नारी की आत्मनिर्भरता एवं जीविका ने

रूढ़ियों को तोड़कर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व की प्रतिष्ठता की है पर साथ ही व्यक्तित्व की अलग स्थापना से नारी के अपने जीवन में अनेक छोटी-बड़ी समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं। एक ओर वह परिवार के दायित्व को संभालने में सहयोगी बनती हैं तो दूसरी ओर पारिवारिक सम्बन्धों की कड़ियों को तोड़ने और एडजस्ट न कर पाने आदि स्थितियों को भी झेलती हैं। अनेक बार दाम्पत्य विघटन तक की समस्या आ जाती है। फिर भी अर्थोपार्जन के आधार पर उसने अलग और विशिष्ट स्थान तो बना ही लिया है। परिवार में बेरोजगारी की घुटन भी एक समस्या है जो परिवार से सम्बंधित तमाम तरह की परेशानी एवं परिवार विघटन को जन्म देती है। दासता की घुटन से मुक्त होने के बाद जिस भारतीय प्रजातांत्रिक परिवेश में नई पीढ़ी को रहना पड़ रहा है उसमें रंगीन स्वप्नों एवं स्वर्णिम कल्पनाओं के प्रासाद चकनाचूर हो रहे हैं। जिन सामाजिक और नैतिक मूल्यों की रक्षा के लिये स्वाधीनता की लड़ाई लड़ी गई थी उसका परिणाम निराशा और मोह भंग के रूप में सामने आया।

आर्थिक विवशता पूँजीवादी अर्थव्यवस्था से पीड़ित मानव पूरे परिवार के लिये उलझन बना हुआ है एवं परिवार उसके लिये समस्या है। आर्थिक विषमता और वर्ग वैषम्य ने भ्रष्ट आचारण एवं ऐसी अनहोनी अनैतिकता को बढ़ावा दिया है जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है।

(ग) निम्न मध्यवर्गीय परिवार की समस्याएँ

इस वर्ग में सामाजिक एवं आर्थिक विषमता से उत्पन्न दारूण यातना, बेबसी कुण्ठा, अवसाद और समझौते की दयनीय परिस्थितियाँ अपेक्षाकृत रूप में निम्न मध्यमवर्ग के सदयों को भोगनी पड़ती है। निम्नमध्यम वर्ग का परिवार आर्थिक साधनों की दृष्टि से मध्यमवर्गीय परिवार की अपेक्षा निम्नत्तर होता हैं और आर्थिक पक्ष की यही दुर्बलता उसे समाज के हर संदर्भ

में पराजित और निरीह बनाती है। परिवार, शिक्षा, जीविका, विवाह, प्रेम तथा समाज के सभी क्षेत्रों में उसे संघर्ष का मुँह देखना पड़ता है। अनवरत संघर्ष के बाद भी वह सफलता के प्रति आश्वस्त नहीं हो पाता है। यही है निम्न मध्यम वर्ग के पारिवारिक व्यक्ति की नियति। सीमित आमदनी, सामाजिक बिडम्बनाओं तथा धार्मिक परम्पराओं के तले पिसता हुआ वह जीवन यापन की अनचाही अवस्थाओं में गुजरता है या यों कहें कि उसे गुजरना पड़ता है।

बरोजगारी एवं बेकारी स्वंतत्र भारत की प्रमुखतम् समस्या है। निम्नवर्ग का मजदूर, नौकर और दूसरे लोग अशिक्षित एवं असंस्कृत होने के कारण तथा गरीबी को अपनी नियति मान कर छोटे से छोटा शारीरिक श्रम करने में नहीं संकुचाते पर निम्न मध्यम वर्ग की मजबूरी यह है कि वह जैसे- तैसे शिक्षा ग्रहण कर पाता, दफ्तर, स्कूल तथा विभिन्न समस्याओं संस्थानों में कुर्सी पर बैठ कर कलम चलाने की अदम्य लालसा उसे शरीरिक श्रम और मजदूरी जैसी नौकरी नहीं करने देती है। अतः अपने से ऊपर वाले मध्यवर्ग, उच्चमध्यवर्ग तथा अपने से नीचे वाले निम्न वर्ग के बीच की जटिलताओं में वह बौना होकर चलता है। जब उसे पढ़-लिखकर नौकरी नहीं मिलती है तब शिक्षा, सभ्यता और बौद्धिकता की निरर्थकता उसे कचोट जाती है। उपर्युक्त विवेचन पर विहंगम दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि उच्च मध्यमवर्ग, मध्य मध्यमवर्ग तथा निम्न मध्यमवर्ग की अनेक समस्यायें एक-सी हैं।

विवाह, प्रेम और काम नौकरी पेशा स्त्री, दाम्पत्य का बिखराव जैसी समस्यायें तीनों ही प्रकार के परिवारों में पाई जाती है।

3.1.1 पति-पत्नी सम्बन्ध का चित्रण

स्वाधीनता पूर्व भारत समाज में बेमेल विवाह - बहू-विवाह, बाल विवाह, पर्दा प्रथा, दहेज और अशिक्षा जैसी सामाजिक समस्यायें मुँह फैलाये खड़ी थी, इसलिये तत्कालीन

कहानीकारों ने इन्हीं समस्याओं के समाधान की दिशा में अपनी लेखनी चालाई है। पति-पत्नी सम्बन्धों के सन्दर्भ में गैंग्रीन अभिभूत कर देने वाली गहरी उदासी है जो निसंदेह जीवन की गहरी यथार्थता है और उसका वर्णन बहुत ही फोटोग्रॉफिक है। आधुनिकता में प्रेमी पति-पत्नीयों के बीच काम के स्थूल रूप को मान्यता मिल गई है। पुरुष का पत्नी पर एक मात्र अधिकार अथवा पत्नी का पति पर निजी अधिकार जैसी नैतिकता अब बदल गई है। एकाकी परिवार को मूल परिवार भी कहा जा सकता है जिसमें प्रायः विवाहित पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चे रहते हैं। यद्यपि ग्रामीण समाज में आज भी संयुक्त परिवार का प्राचीन रूप बहुत कुछ देखने को मिलता है परन्तु शहरों में इसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। प्रेम विवाह, विवाह-विच्छेद, गर्भ-निरोध, परिवार नियोजन तथा अविवाहित रहने की प्रवृत्ति ने एकाकी परिवार के धरातल को सुदृढ़ बना दिया है। पति-पत्नी दोनों की समानता की इच्छा के कारण सन्तान पर पिता के अधिकार कम हो गये है।

लेखिका के 'आवर्तन' उपन्यास में भारतीय परिवेश में व्याप्त स्त्री-पुरुष सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है। जिसमें पत्नी (पार्वती) शब्द रूप में और पति (अमर) उस शब्द में निहित अर्थ के रूप में सामने आया है। लेखिका ने अर्थ को सार्थक बनाने वाली मूल शक्ति शब्द को ही महत्व दिया हैं। इस उपन्यास का नायक पढ़ा-लिखा युवक है और एक कॉलेज में प्रवक्ता के पद पर आसीन है। उसके चरित्र में हमें हीन भावना के दर्शन होते है। हिन्दी को पढ़ाने को लेकर उसे साथी सहयोगियों से कई बार बहस में शामिल होना पड़ता है। यह उसकी हिन्दी भाषा को लेकर जो मन में हीन ग्रंथि बैठ चुकी है उसी का प्रतीक है। उपन्यास का नायक अमर अपनी पत्नी के देहाती होने के कारण विदेशी लड़की मीरा रामचन्द्रन के आकर्षण में बंधने लगता है। किन्तु मीरा की एक फटकार ही उसे पुनः घर का रास्ता दिखा देती है। लेकिन घर पर भी वो पार्वती से बेरूखी से पेश आता है।

पार्वती के कितनी बार विनय करने पर भी वो बच्चे के लिये डॉक्टर को बुलाकर नहीं लाता जिस कारण तबीयत बिगड़ने के चलते उसके बेटे की मृत्यु हो जाती है। पार्वती अपने बच्चे की मौत का दोषी उसे मानती है और उसे छोड़कर मायके चली जाती है। अमर पार्वती से मिली दुत्कार को बर्दाश्त नहीं कर पाता है। अमर के अहं को जो चोट पहुँचती है उसका खामियाजा अमर के रिश्ते में लगती भानजी को चुकाना पड़ता है। अमर मिनाली से दैहिक सम्बन्ध बनाता है जो उसके चरित्र की गिरावट को उघाड़ता है। अमर ने सभी नारियों के देह के परे जाने की कोशिश न की जिस कारण अपने अह्म व हीन ग्रंथि के चलते कुकृत्य करने से भी पीछे न रहा।

प्रस्तुत उपन्यास में नारी के विभिन्न रूपों के चित्र मिलते हैं। मीरा आधुनिक व स्वतन्त्र नारी, पार्वती संस्कारी, भारतीयता को ओढ़े किन्तु बच्चे की मृत्यु पर पति को निर्मम तरीक ढंग से ठुकराती और मिनाली के रूप में युवा लड़की का चित्र खींचा है। पार्वती के व्यक्तित्व के प्रभाव के कारण ही अंत में अमर पूरे घर में उसे याद करने लगता है। उसी की स्मृतियों में अपनी जिन्दगी जीने लगता है। अमर पार्वती को पुनः अपनी जिन्दगी में लाना चाहता है जो कि भारतीय परिवेश में पति-पत्नी के रिश्ते की सच्चाई को ही हमारे समक्ष लाता है। किन्तु अब प्रश्न पार्वती को लेकर मन में रह जाता है कि क्या वो अमर की सच्चाई को जानकर उसे अपनाना चाहेगी? पति-पत्नी के सम्बन्धों में परिवर्तन लाने के लिये किसी हद तक जीविका का स्तरीय भेद भी उत्तरदायी है । वैवाहिक सम्बन्धों की पृष्ठभूमि में आर्थिक प्रभुत्व की भावना प्रच्छन्न रूप से विद्यमान रहती है। पति-पत्नी में से जो भी जीविका की दृष्टि से प्रभावशाली होता है उसी के मूल्यों को मान्यता प्राप्त होती है स्पष्ट रूप में कह सकते है कि आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता के कारण स्त्री पुरुषों का वैवाहिक जीवन पहले की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी अवश्य हुआ है। पर इन्हीं परिस्थितियों के कारण कई बार दोनों के स्वतंत्र व्यक्तित्व एक दूसरे की बाधा बन जाते

हैं और तलाक विच्छेद जैसी कानूनी मान्यता के माध्यम से वे एक दूसरे के मार्ग से हट जाते हैं किन्तु समस्या का अन्त यहीं नहीं होता डायवर्स के कारण, आत्म परायापन, कुण्ठा, हताशा, अन्तर्द्वन्द्व एवं संतान आदि की नयी समस्यायें पैदा हो जाती हैं जिसे छुटकारा पाना असंभव सा हो जाता है। यही कारण है कि कभी पुनः वहीं लौट आने की स्थिति तथा कभी अन्यत्र देख सकते हैं।

3.2.2. माँ–पुत्र – पुत्री सम्बन्ध का चित्रण

स्वाधीनता से पूर्व माता - पुत्र सम्बन्धों के आधार पर जो कहानियाँ लिखी जाती थीं उनका मुख्य ध्येय एक आदर्श विशेष को प्रस्तुत करना था। प्रेमचंद युगीन कहानियों का अध्ययन करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उस युग को माता-पुत्र पुराने संस्कारों और आदर्शों के परिपालन के निमित्त मात्र है। माँ के समक्ष वात्सल्य एवं ममता का लक्ष्य है तो पुत्र के समक्ष मातृ-भक्ति और आज्ञाकारी पुत्र बनने का निश्चित लक्ष्य है।

'अपार्थ' उपन्यास में प्रमुख पात्र व नायक अशोक सारी जिन्दगी उपेक्षा व वितृष्णा का शिकार बनता है। नायक अशोक ताउम्र अपनी माँ के प्यार के लिये तरसता रहा परन्तु माँ के हाथों का नर्म स्पर्श हासिल न कर सका। जो माँ अपने बच्चों के लिये सारी जिन्दगी कष्ट सहती है उसी माँ ने उसकी मौत के लिये कई बार बदुआ की। उसे उसके परिवार के द्वारा उपेक्षित जीवन जीने के लिये मजबूर किया जाता है। नायक जिन्दगी भर अंधकार में ही चलता जाता है। रोशनी की छोटी सी किरण भी उसे नहीं मिलती। पराजय की काली छाया उसका पीछा नहीं छोड़ती जिस कारण जन्म से लेकर मृत्यु तक वह अपनेपन प्यार की तलाश में भटकता रहता है। अपनी जीवन-लीला को समाप्त कर देना और इस संसार को हमेशा-हमेशा के लिये छोड़कर चला जाना चाहता है। मरना या खुद को खत्म कर देना कोई आसान कार्य नहीं है किन्तु अपनों

के अभाव में जीने वाला इंसान आत्महत्या के अलावा कोई और रास्ता नहीं अपनाता और इसी तरफ चल देता है।

सुरक्षा की छतरी बनकर बच्चों की रक्षा करने वाली ममतामयी माँ का रूप कोसों दूर रहा। उसके जीवन में सिर्फ उसकी बहन निर्मला ही थी जिसने उसे समझा व प्यार दिया, किन्तु लोकोपवाद के चलते ससुराल पक्ष द्वारा उसकी हत्या कर दी गई। अशोक अपनी बहन की मृत्यु का कारण स्वयं को समझता था जिस कारण उसमें हीन भावना के साथ अपराध भावना ने भी जन्म ले लिया। माँ का रूप लेकर पत्नी सुधा उसके जीवन में आई किन्तु वो भी माँ की तरह ही उसे हर समय आँखों के तराजू पर तोलती रहती। सुधा ने अपनी महत्वाकांक्षा के कारण अशोक को ठुकरा दिया और उसके बॉस के साथ चलती बनी। जिस कारण उसे गहरा आघात पहुँचा। अपने जीवन में कभी माँ, भाई, पत्नी, बॉस व रघु (दोस्त) से मिलते लगातार झटकों के कारण अशोक इसे बर्दाश्त न कर सका।

माता-पुत्र-पुत्री के सम्बन्ध में परम्परागत जीवन मूल्यों के विघटन एवं नवीन जीवन मूल्यों के फलस्वरूप उत्पन्न टकराहट की जो गूंज सुनाई देती है उसमें माँ-बेटी के सम्बन्धों का बदलाव विशेष महत्व रखता है। पिता की अपेक्षा बेटी-माँ के अधिक निकट होती है। माँ की ममता पुत्री से अधिक इसलिये होती है कि वह पराये घर का धन मानी जाती है। अब तक पिता की सम्पत्ति में भी उसका अधिकार नहीं था अपने विवाह आदि के विषय में भी वह चुप रहती थी। परिवार में बेटी की अपेक्षा उसका व्यक्तित्व लघुतर माना जाता था पर अब स्थिति बदल गयी है I

भारतीय परिवार में भाई की स्थिति बहन की अपेक्षा सदा से उच्चतर मानी जाती रही है। पिता का उत्तराधिकारी होने के कारण भाई को एक ओर पारिवारिक सम्प्रभुत्ता प्राप्त हुई तो

दूसरी ओर सामाजिक उपलब्धियों के द्वार भी उसके लिये खुल गये। बेटी को परम्परागत रूप से पिता और भाइयों के संरक्षण और अनुशासन को नत-मस्तक होकर स्वीकार करना पड़ा लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात स्थिति में परिवर्तन आया। शिक्षा के माध्यम से प्राप्त आर्थिक और सामाजिक स्वतंत्रता के कारण बहन ने भी अपने निजी व्यक्तित्व को समझा और प्रतिष्ठित किया है । यद्यपि अभी पूर्ण रूप से बहन ने भाई की समकक्षता प्राप्त नहीं की है। परन्तु इसमें दो राय नहीं है कि शैक्षिक और संवैधानिक सुविधाओं में उसे पर्याप्त रूप से व्यक्तित्व निर्माण और व्यक्तित्व प्रतिष्ठा के सुअवसर प्रदान किये हैं। विशेष रूप से नगर जीवन और यत्र तत्र कस्बाई जीवन में भी बहनें नौकरी कर रही हैं । सभा संस्थाओं से जुड़ती जा रही हैं और पुरानी मान्यताओं तथा रूढ़ियों को तोड़ रही हैं।

3.1.3. नारी चेतना का चित्रण

नारी, सृष्टि की वह अद्भुत रचना है जिसके समक्ष सम्पूर्ण संसार नतमस्तक है। नारी प्रकृति का सुन्दरतम् उपहार है जिसके अभाव में सृष्टि की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। नारी लोक की धुरी है। परिवार का अस्तित्व उसके साथ ही उजागर होता है। साहित्य समाज का मुख्य अंग है और नारी समाज का अर्द्धांग है, इसलिये साहित्य का नारी से गहरा सम्बन्ध है। प्रसंग से ही साहित्य में नारी-संवेदनाओं की अभिव्यक्ति होती रही है। समाज की बदलती हुई रूचि, स्थिति एवं परिस्थिति साहित्य में प्रतिबिम्बित होती है। इसलिये भिन्न-भिन्न कालों में नारी की स्थिति के अनुरूप साहित्य में नारी का चित्रण होता रहा है। इस प्रकार मानव जाति का आधा भाग नारी जाति का है। यदि कोई समाज नारी की अवहेलना करके विकास करना चाहे तो उसका पूर्ण विकास नहीं हो सकता है, क्योंकि नारी के सहयोग के बिना मानव का कोई भी कार्य सम्पन्न नहीं होता । नारी समाज में उतनी ही महत्वपूर्ण है जितना की पुरूष । डॉ गणेश दास के अनुसार ‘‘नर और नारी देखने में दो लगते हैं किन्तु वे एक ही मूल तत्व के दो रूप है।''[3]

इसीलिए मानव-जीवन की परम्परा को स्थिर रखने हेतु नर-नारी दोनों के सहयोग की आवश्यकता होती है।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मातृसत्तात्मक समाज से अभिप्राय जिस समाज में माता की सम्पूर्ण सत्ता है उस समाज में नारी पूर्ण स्वतंत्र थी। उसके ऊपर किसी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं होता था। वह प्रत्येक निर्णय लेने में स्वतंत्र एवं स्वच्छंद थी। फिर भी मातृसत्तात्मक समाज में नारी की प्रधानता होने पर भी नारी ने कभी भी पुरूष पर अपना वर्चस्व स्थापित करने की चेष्टा नहीं की और पितृसत्तात्मक समाज में नारी की पुराकाल के प्रारंभिक दिनों से ही पुरूष ने अपनी जैविक विशिष्टता के कारण हमेशा स्वयं को सर्वोच्य रूप में रखा है। इस समाज में स्त्री को अमानवीय कुकृत्यों का सामना करना पड़ता था। पुरूष स्त्री को अपनी सम्पत्ति समझकर जमीन एवं पशुओं की भाँति खरीदता और बेचता था। दूसरों से खरीद कर पुरूष स्त्री को अपनी पत्नी बनाता था। स्त्री पिता की सम्पत्ति के रूप में रहती थी। फिर पति की सम्पत्ति कहलाती थी स्त्री की संतान उसके पति की सम्पत्ति समझी जाती थी। उसके पास पिता या पति से अलग अपनी कोई निजी सम्पत्ति कुछ भी नही होती थी। पितृ - प्रधान समाज में औरत का अस्तित्व पूरी तरह समाप्त हो गया था। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण अब उसके स्वतंत्र अस्तित्व का प्रश्न ही नहीं उठता था।

स्त्री समाज में चेतनागत जागरूकता की एक महत्वपूर्ण दृष्टि है। 'पासवर्ड' उपन्यास के नायक डॉ० आशीष का विदेश- उपक्रम और अपने इस अनुभव को कथा–नायिका एक यात्रा की संज्ञा दे डालती है- "ये पांच साल मेरे औरत होने की यात्रा है, औरत को जानने समझने की एक औरत के रचनात्मक निर्मित की, अपने को देखा, अपने से अलग हुई, अपने जीवन को महसूस करने को जीवंत हुई, अपने से अलग हुई.... हमारे लिये घटनायें महत्वपूर्ण नहीं होंगी, तिथियाँ भी नहीं, तथ्य और आंकड़े भी नहीं एक कालखण्ड में जिए गये अनुभव, यह प्रयोग

अपनी इस यात्रा को आगे ले जाता है।"[4] डॉ० आशीष की दुनिया उससे बिल्कुल अलग-जमा-नफी, मल्टीफिकेशन की दुनिया है। दोनों उत्तरी व दक्षिणी ध्रुव की तरह अलग-अलग थे। फिर भी पांच वर्ष से ज्यादा साथ रहे पर वह उससे दूर अमेरिका चला जाता है और उससे सारे सम्पर्क तोड़ लेता है। डॉ० आशीष के इस रूप को देखकर वह हैरान होती है कि शायद उसने उसे समझने में भूल कर दी।

'हैमबरगर' उपन्यास में लेखिका ने बताया है कि सारे अधिकारों के बाद भी पश्चिम में स्त्री की स्थिति बेहतर नहीं कही जा सकती है। समस्याओं के स्वरूप बदल गये हैं। समस्याएं खत्म नहीं हुई हैं। पश्चिम में भी अकेली, उदास निष्कासित औरतें है पर वे जीती हैं, अपनी तरह से। उपन्यास की नायिका रतिन्द्र ने देखा था। हर पुरूष स्त्री के शरीर को प्यार करता है। स्त्रियाँ ढूँढती है सुरक्षा, आश्वासन और स्थिरता। लेखिका ने लिखा है कि "उसने कैट को पति के रूप में चाहा था। वह जो भी था, विदेशी भौतिकवादी, देहप्रधान जीवनदृष्टि वाला पर एक खरा इन्सान था। ईमानदार और पारदर्शी। यह भाव उसको एक गहरे आदर के साथ जोड़ता था। इसलिये उसका संबंध स्थायित्व की मांग करता था।"[5] रतिन्द्र एक ऐसे रिश्ते की तलाश में है जो देह से ऊपर हो और जिसकी नींव विश्वास, अपनत्व पर आधारित हो।

विपरीत परिस्थितियों में भी जिजीविषा की सकारात्मक चेतना का 21वीं शताब्दी की नारी में अपार संभावनायें है। सिर्फ पुरूष के साथ विवाह और बच्चे जनना ही उसकी नियति नहीं है। नारी का अपना अस्तित्व है, उसकी अपनी मंजिल है। 'हैमबरगर' उपन्यास की नायिका रतीन्द्र पश्चिम की दुनिया के सम्पर्क में आकर समझती है कि जिन्दगी यूं ही छोड़ दी जाने वाली चीज नहीं है। उसके साथ जो हुआ, उससे कहीं अधिक क्रूर और कुंठित होने पर भी स्त्रियां जीती हैं। अपनी तरह अपनी शर्तों पर। पश्चिम में संबंध स्वतंत्र है। "यहां वह स्वतंत्र थी। उसे नहीं सोचना था कौन क्या कहेगा। घर, परिवार, मर्यादा, इज्जत, समाज कोई आड़े नहीं था। यह अनुभव की

ऐसी सच्चाई थी, इज्जत जहां उसका मन अचेतन की रूढ़ियों परिपाटियों के दबाव से हटकर देख रहा था।"[6] इस तरह रतीन्द्र बदलते परिवेश में आकर अपनी स्थिति पर चिंतन करती है और अपने जीवन का पुनः निर्माण करती है, उन्नति की ओर अग्रसर होती है वह अपने बच्चे को अपनी कमजोरी नहीं बनने देती है और विपरीत परिस्थितियों से संघर्ष करते हुये अंततः विजय प्राप्त करती है। रतीन्द्र का जीवन परिवार और समाज केन्द्रित होते हुये भी अपनी अस्मिता के प्रति सजग है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नारी की विभिन्न समस्याओं का हल उसे खुद ही खोजना होगा। घर के अंदर बैठकर अपने हाल पर रोने की बजाय बाहर निकलकर चुनौतियों का सामना करना होगा। आर्थिक रूप से आत्म निर्भर बनना होगा जैसा कि कमल कुमार के कथा - साहित्य के विभिन्न नारी पात्र आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं। पुरूष की उसको गुलाम बनाये रखने की मानसिकता को वह केवल इसी आधार पर टक्कर दे सकती है। अपनी विभिन्न समस्याओं के हल के लिये किसी संघर्ष या आन्दोलन के इंतजार में बैठे रहने के बजाये अपने सीमित साधनों से ही ऊर्जा और शक्ति संचय करते हुये अपने साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ आवाज उठाए। अगर वह निरंतर इस ओर गतिशील रहे तो निश्चित रूप से उसका आने वाला भविष्य वर्तमान स्थिति से ज्यादा सुखद होगा। उनके कथा-साहित्य के विभिन्न नारी पात्र कहीं शिक्षा के स्तर पर समाज को बदलने का प्रयास करते हैं तथा कहीं परम्परागत रूढ़ियों का भी विरोध करते हैं। विरोध और आक्रोश को झेलते हुये उसने अपने आसपास जो लक्ष्मण रेखा खींच ली है उससे उन्हें स्वतः उबरना है। उसे अपनी सामाजिक पहचान सही और सकारात्मक तरीके से प्राप्त करना है। स्त्री लेखक में आज जो मूल परिवर्तन आया है वह महिला साहित्यकारों के लिये अब स्त्री का रूपक न लिंग है, न आधी दुनिया। वह एक सतत् परिवर्तनशील समाज

है। आज की महिलायें अपने व्यक्तित्व, अपनी अस्मिता, अपने स्वत्व और निजत्व के साथ-साथ आत्मनिर्भरता स्वतंत्रता एवं अधिकारों के प्रति सचेत हैं।

3.1.4. विधवा समस्या का चित्रण

भारत में स्त्रीवादी साहित्य के उत्थान में बंकिमचंद्र, रवीन्द्रनाथ टैगोर, मुंशी प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, महादेवी वर्मा, मीराबाई, सुभद्रा कुमारी चौहान, अमृता प्रीतम, सरोजिनी नायडू इत्यादि साहित्यकारों ने महती भूमिका निभाई। स्त्री-स्वतंत्रता के पक्षधर प्रेमचंद ने नारी की पराधीनता अनमेल विवाह, दहेज प्रथा, विधवा की दीन-हीन दशा इत्यादि को अपने साहित्य का विषय बनाकर भारतीय नारियों को उनकी दयनीय दशा का आईना दिखाया और स्त्री चेतना जागृत की । भारतीय संस्कृति के उन्नायक, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत, यशोधरा, द्वापर जैसी कालजयी रचनायें लिखकर उपेक्षिता नारियों के उद्धार एवं नारी- गौरव की महिमा का गुणगान किया । जयशंकर प्रसाद ने ध्रुवस्वामिनी नाटक में नारी को वस्तु के बजाय व्यक्ति मानने का उद्घोष ध्रुवस्वामिनी के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त किया— "मैं उपहार में देने की वस्तु शीतलमणि नहीं हूँ। मुझमें रक्त की तरल लालिमा है। मेरा हृदय उष्ण है और आत्मसम्मान की ज्योति है। उसकी रक्षा मैं ही करूँगी।"[7]

'मैं घूमर नाचूँ', स्त्री विमर्श पर लिखने वाली लेखिका कमल कुमार का यह उपन्यास राजस्थान की पृष्ठभूमि पर आधारित है। कृष्णा नामक बाल विधवा को जो वैधव्य का मतलब तक नहीं जानती, निरंतर उपेक्षित जीवन जीने के लिये मजबूर किया जाता है। बावजूद इसके वह अपने लिये एक नई राह बनाती है और अपनी औरत की अस्मिता को पहचानती है। कृष्णा को महाभारत की द्रौपदी के रूप में चित्रित किया गया है क्योंकि द्रौपदी के समान ही उसे भी पुरूष प्रधान समाज द्वारा किये जाने वाले अत्याचारों को सहना पड़ता है और उसी के समान

वह उन पर विजय प्राप्त कर लेती है। यही उपन्यास की आधारभूमि है। इस उपन्यास की नायिका कृष्णा को बाल विधवा के कारण कई पाबंदियों का सामना करना पड़ता है। वह गाँव के किसी कार्यक्रम में भाग नहीं ले सकती। वह किसी तीज त्यौहार में शामिल नहीं हो सकती है। बापू कहता "तेरे भाग मा कोनी लिखया, मेरी बच्ची । जो म्हारे भाग माँ लिखा वौ कारणों पड़े ।"[8] लेकिन शादी के बाद भी वह किसी तीज त्यौहार में शामिल नहीं होती क्योंकि उसके पति डॉ० शाह को गाँव कस्बे की सब बातें बिल्कुल पसन्द नहीं है। वह सोचती है कि बापू सच कहता था "तेरे भाग मा ना लिख्या। पहले विधवा थी तो नहीं था, अब सधवा हूँ तो भी नहीं है।''[9] इस प्रकार औरतों को पूर्व निर्धारित खाँचों में फिट कर दिया जाता है, उनकी नियति पहले से ही तय कर दी जाती है। नायिका कृष्णा इतनी छोटी है कि उसे वैधव्य का मतलब भी नहीं पता है किन्तु हर कदम पर उसे एक विधवा की तरह कठोर जीवन जीने के लिये विवश किया जाता है। जब भी कोई त्यौहार आता है, कृष्णा जाने की जिद करती है तो उर्मिला बुआ उसे अन्दर ले जाती है - "देख मैं भी कोनी गई, मैं बोतो न नाची । हम दोनों विधवा है । चल आ भीतर आजा|"[10] बड़ा मार्मिक वर्णन है कि किस प्रकार औरतों को पूर्व - निधारित खाँचों में फिट किया जाता है, किस प्रकार उनकी नियति पहले से ही तय कर दी जाती है। नारी समानता की धुरी होने के कारण मानवीय मूल्यों की संवाहक है। समाज में धर्म, सभ्यता, संस्कृति परम्परायें और वंश नारी पर आधारित है। समाज का सौन्दर्य, समृद्धि उसी के हाथों में है क्योंकि नारी ही अपनी योग्यता के फलस्वरूप समाज को आदर्श परिवार प्रदान करती है, जिससे समाज में समानता का विकास होता है ।

विधवाओं के प्रति समाज एवं परिवार का उपेक्षणीय व्यवहार अत्यंत भयावह होता है। उन्हें इस दुर्भाग्य के लिये मृत्यु जैसे दंड का भी प्रावधान है। उन्हें अपना शेष जीवन तिल-तिल कर जीना पड़ता है। घर के सामाजिक उत्सवों जैसे (जन्मदिन, शादी, जापा में उनका शामिल

होना वर्जित / अपशगुन माना जाता है। उसको कुलच्छनी, राड़, दुर्भागी, नासपीटी इत्यादि नामों से सम्बोधित किया जाता है। हमारा सामाजिक ढांचा ऐसा बना हुआ है कि हमारे सामाजिक उत्सवों में विधवा का शामिल होना वर्जित माना जाता है। पुरूष जिन मानवीय दुर्बलताओं पर विजय अटूट संयम और साधना से भी प्राप्त नहीं कर पाया उन्हीं पर विजय प्राप्त करने का आदेश बाल-विधवाओं को दे देता है। उन अबोध बालिकाओं को जीवन का भी ज्ञान नहीं है। जिन्हें छोटी उम्र में ही जीवन की तमाम वर्जनाओं का सामना करना पड़ता है।

एक विधवा विपरीत परिस्थितियों में भी जीने की इच्छा रखती है। 'के नाम है थारो' कहानी प्रेमकथा, दुःखकथा और स्त्री जीवन की जिजीविषा की कथा है, प्रस्तुत कहानी हवेली की बाल - विधवा की अनंत असुरक्षाओं और यातनाओं का पर्दाफाश करने वाली एक बहादुर लड़की की कहानी है। कमल कुमार की इस कहानी में एक गाँव में रहने वाली बाल विधवा स्वांगी वैधव्य के अभिशाप को जीवन से अधिक महत्वपूर्ण नहीं मानती। वह अपने ही परिवार की आदर्श विधवा बुआ से कहती है कि "देख बुआ न मैं लड़की हुई, न पत्थर हुई, न लोहा हुई। मिक्खा मरणे था, मैं कोईषी मरी थी। मैं तो जिन्दा हूँ। मेरी जिन्दगी और बुआ की जिन्दगी एक नहीं हो सकती। नहीं, मैं बुआ की छाया नहीं हूँ। अर्थात् मैं, मैं हूँ।"[11] एक पूरी परम्परा से मुक्त होती एक अधिक सशक्त जीवित और आधुनिक औरत लेकिन यह तभी संभव हुआ जब स्वांगी ने अनूप का प्रेम प्राप्त कर लिया। वह प्रेम के लिये परम्परा को त्यागी है। उसकी इच्छायें, कामनायें अभी भी जीवित हैं। विधवा की समस्याओं पर पिछले सौ वर्षों में लिखा जा रहा है। प्रेमचंद से लेकर आज तक सामाजिक चिन्तन के रूप में इस पर बहुत कुछ लिखा गया है। लेकिन कमल कुमार ने इस पुराने विषय में नयी ताजगी पैदा की है। प्रस्तुत कहानी बाल विधवा के विवरणों के लिये याद नहीं रखी जायेगी बल्कि औरत की जिजीविषा को जिस रूप में इसमें

व्यक्त किया गया है वही इस कहानी को विशिष्ट बनाती है। औरत जीना चाहती है, उसे जब भी अवसर मिलता है वह इसे अपने उपयुक्त बनाती है।

3.1.5. आत्महत्या का चित्रण

कमल कुमार की दृष्टि में यथार्थ की अभिव्यक्ति के दो धरातल हैं। पहला आम आदमी, आज के विसंगत और विषम समय में भ्रष्ट व्यवस्था के कुचक्र में फंसा, शक्तिशाली सत्ता की दहशत में जीता है। यह आम आदमी उनकी कहानियों और कविताओं में 'रामदीन' है तो कही ज्वालामुखी सा उबल रहा है। "ऊपर वाले की कृपा' का 'रामदीन' 'अपार्थ' का अशोक भी वहीं है। स्वार्थी दुनिया में आम आदमी शक्तिशाली के हाथ में शतरंज की गोट सीखता है। पिटना उसकी नियति बन जाती है, पिटना और पराजय दोनों स्थितियों के बीच जिन्दगी रेत - सी उसकी मुट्ठियों से रीत जाती है, बिना अंत तक लड़े वह घुटने टेक देता है। वह जीना चाहता है, पर जी नहीं सकता। वह पार्थ नहीं बन पाता और 'अपार्थ' हो जाता है। संस्कृति संक्रमण के काल में यही आत्महत्या का दर्शन है। अभावों, वर्जनाओं, सामाजिक प्रताड़नाओं और जीवन की निरर्थकता के अहसास तले तिल-तिल करते समाप्त हो रहे सामान्य भारतीयों की गाथा है 'अपार्थ'।

कमल कुमार ने आत्महत्या की खबरों को अखबारों में पढ़ा या समाज में सुना था पर एक लेख के सिलसिले में उन्होंने आत्महत्या की कई घटनाओं की विस्तृत और गहरी जांच पड़ताल की। कुछ लिखे पढ़े तो उन्हें लगा कि आत्महत्या किन्हीं विशिष्ट क्षणों की आपूर्ति में नहीं होती है। आत्महत्या की प्रक्रिया कुछ विशेष प्रकार के दीन और दुर्बल प्रवृत्ति वाले व्यक्ति के बीच निरंतर घटती रहती है। ऐसे लोगों को यदि उचित और उपयुक्त अवलम्ब नहीं मिलता तथा पारिवारिक और सामाजिक उपेक्षा और अन्याय उन्हें आत्महत्या के लिए विवश कर देते

हैं परन्तु आत्महत्या के पूर्व वह गहरे पश्चाताप से गुजरता है क्योंकि हर व्यक्ति जीना चाहता है। आत्महत्या जीने न दिये जाने का उपक्रम है, जीने की अदम्य चाह का त्रासद प्रतिफलन है। 'अपार्थ' उपन्यास आत्महत्या के विरोध में हैं। अपार्थ में स्थान-स्थान पर भावनाओं के अजस्र निर्भर है और सौभाग्य से उपन्यासकार के पास भावना के उद्याम आवेगों के साथ पूर्ण न्याय करने वाली भाषा भी है। यह उपन्यसकार के साथ-साथ साहित्य की भी उपलब्धि है। 'अपार्थ' उपन्यास में मार्मिकता, आशावादी जीवन दृष्टि, यथार्थवादी चेतना, मनोवैज्ञानिक प्रकृति और प्रौढ़ शिल्प विधि आदि विशिष्टाओं के आधार पर समकालीन महत्वपूर्ण हिन्दी उपन्यासों के बीच अपनी अपनी पहचान बनाने में सक्षम है। इस कृति के आलोक में लेखिका के आगामी कथा सृजन की महती संभावनाओं के प्रति एक सहज आशा हमारे मन में जागती है।

'अपार्थ' उपन्यास का अशोक जो कि उपन्यास का प्रतिनिधि चरित्र है, एक मध्यवर्ग भारतीय के घर, दफ्तर तथा समाज से आबद्ध नियति का सटीक प्रतिनिधित्व करता है। अशोक देश के उन बहुत से युवकों जैसा है, जिसकी किसी भी युद्ध में हार निश्चित है। 'अभुक्त मूल' नक्षत्रों में जन्मा बालक परिवार में सबकी वितृष्णा का केन्द्र है। सबकी उपेक्षा के शिकार बालक को सहारा देता है ममतामयी निम्मा दीदी वे ही उसमें सबसे पहले अस्तित्व बोध जगाती हैं। "आत्महत्या पाप है, इससे आत्मा मुक्त नहीं होती, भटकती रहती है। जीवन परमात्मा की नेमत है। इसे जीना हमारा धर्म है। मन ही हमारे जीवन का आधा बिन्दु है। वहीं से हम जीते हैं और वहीं से मरते हैं। इसलिये संकल्प कर मन से कि आगे कभी ऐसे मरने की नहीं सोचेंगे।'''[12] 'अपार्थ' के नायक अशोक की आत्मघाती मानसिकता के माध्यम से उसकी चारित्रिक शक्तिहीनता की ओर संकेत किया है। वहीं मृत्यु के समय नायक के द्वारा आत्मघात के लिये आत्मभर्त्सना और जीवन के प्रति उसकी स्वीकृतिमूलक भावनाओं के अंकन के ब्याज से जीवन के प्रति आशावादी दृष्टि का भी समर्थन किया है। मरते हुए नायक की परिवर्तित

आस्थामूलक चेतना का बोध निम्नलिखित पंक्तियों से बड़ी सहजता से हो जाता है— "वह आज भी जीना चाहता है...... वह मरना नहीं चाहता था। जीवन सौभाग्य........ जीवन अलभ्य है........ जीवन सत्य है .... आत्मा का आलोक है। जीवन धूप-छाँह का क्रीड़ा कौतुक है। जीवन ऊर्जा है.... सतत् संलग्नता के लिये। सतत् चेष्टा है। आत्मसृजन के लिये। यह शरीर..... यह शरीर जो अदृश्य आत्मा का दृश्य रुप है .... परमात्मा का प्रतिबिम्ब है......सृष्टि का ब्रह्म है......... इसे नकारा नहीं जा सकता यह अपार्थ नहीं है.........यह अपार्थ नहीं हो सकता।"[13] जहाँ एक ओर वह घर में मां और पत्नी के घातक व्यवहारों से त्रस्त होता रहता है। वहीं दूसरी ओर उसे अपने बॉस, मित्र राघव तथा दफ्तर के अन्य सहयोगियों की अपेक्षा का दंश भी झेलना पड़ता है। भ्रष्ट व्यवस्था के कठोर आघात ही उसे आस्था शून्य बना देते हैं जिसके परिणाम स्वरुप वह आत्महत्या के लिये विवश हो जाता है।

'बाढ़' कहानी की सन्तानहीन नायिका भी अपने पारिवारिक जीवन में अनादर, उपेक्षा और क्लान्ति का अनुभव करती है। वह उसी वातावरण में एक पराए पुरूष के संसर्ग से गर्भवती होती है जो कि एक नौकर है किन्तु जब उसे इस वास्तविकता का ज्ञान होता है कि वह अपनी कोख में जिसका बोझ ढो रही है वह रिश्ते में उसके मुँह बोले पुत्रवत है, तब उसके मन में अपने आपके प्रति कलंकित घृणा की भावना जगती है और वह अपने पेट में कटार घोंपकर आत्म हत्या कर लेती है। निश्चय ही उसकी इस आत्महत्या के पीछे उसके मन का नैतिकता बोध ही निहित है। "सुना है मालकिन को दिन चढ़ गये है। भाग जग गये कोठी के...... इतने बरसों बाद......यह करिश्मा...... | सुनकर सेठ भी दौड़ा आया था.....कुछ रुककर चला गया।[14] इस प्रकार कहानी की नायिका भारतीय संस्कृति के प्रति सजग होते हुए भी बाद में अपनी हत्या कर लेती है।

3.2 आर्थिक समस्या

अर्थ आधारित स्तरीकरण से अभिप्राय है जब समाज में व्यक्ति की स्थिति का निर्धारण अर्थ द्वारा किया जाता है। मार्क्स द्वारा अर्थ की महत्ता को स्वीकार किया गया है। समाज में अर्थ के आधार पर विभाजन देखने को मिलता है। कमल कुमार ने अर्थ के आधार पर समाज में जो वर्गीकरण देखने को मिलता है उसी आधार पर समाज के तीन वर्गों को अपने कथा साहित्य में वाणी दी है वे वर्ग हैं उच्चवर्ग, मध्य वर्ग और निम्न वर्ग। इन सब वर्गों के बीच पाये जाने वाले भेद को इससे समझा जा सकता है— उच्च्वर्ग में बड़े-बड़े उद्योगपति, पूँजीपति अमीर वर्ग शामिल होते हैं। जिनका उत्पादन के स्रोतों पर नियंत्रण होता है । मध्यम व निम्न वर्ग पर इनके द्वारा नियंत्रण रखा जाता है। उच्चवर्ग अपने सामाजिक स्तर को बरकरार रखने के लिये मजदूरों का शोषण करते हैं ।

कमल कुमार के कथा साहित्य में उच्च वर्ग निम्न वर्गों का आर्थिक शोषण करता दिखाई देता है। उच्च वर्ग दिखाने का ढोंग रचता है और उसी में प्रसन्न रहने की कोशिश करता है। विलासितापूर्ण व्यक्तियों की रचना उच्च वर्ग के सन्दर्भ में कमल कुमार ने की है। उच्च वर्ग के लोगों का ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व ढोंग कमल कुमार ने कथा साहित्य में उच्च वर्गीय लोगों के जीवन की ऐश्वर्यता का जीवंत चित्रण किया है। उनका जीवन सारे ऐशो-आराम के साधनों से भरा पड़ा है। 'पहचान' कहानी-संग्रह की परिणति' कहानी में सुनील उच्च वर्ग से सम्बन्ध रखता है। अनिल उसका भाई जब उसके घर उसे मिलने जाता है तो घर का चित्रण इस प्रकार है— "भाई के बंगले के सामने खड़ा था | स्वप्न महल सा! 'सुनील विला' ..... गेट से ड्रांइगरुम तक पहुँचने की यंत्रणा झेलने के बाद मैं आधे हिस्से तक सोफे में धंसा एयरकंडीशन कमरे और दरबान तथा एलसेशियन कुत्ते की चौकिदारी से लैस अपने को नितांत असुरक्षित महसूस कर रहा था |"[15]

उच्च वर्ग को लोगों के पास अपने शौक को पूरा करने के साधन भी होते है। उच्च वर्ग के घरों में जरूरत से ज्यादा सुविधायें होती हैं। 'मैं घूमर नाचूँ' में कृष्णा का दूल्हा जब उसे गाड़ी में लेने आता है तो वो कहती है कि गाड़ी तो सिर्फ गाँव में उच्च वर्ग के पास ही हुआ करती थी।

"दो गाड़ियों में बैठकर सभी आठ-दस लोग आ गये थे। कस्बे में खलबली-सी मच गई थी। कोई बापू की किस्मत सराहता, ऐसा दूल्हा ऐसा घर। तब कस्बे में कारें ही कहाँ थी। एक दो कारें हवेली वालों की थीं। वे भी यहाँ इन छोटे घरों और पतली गलियों में कहाँ दिखती।"[16] इस प्रकार गाड़ियाँ सिर्फ अमीर घराने के लोगों तक ही आसानी से उपलब्ध थी। आम लोग तो उसे देख भी नहीं पाते थे। उच्च वर्ग के लोगों के लिए हर एक वस्तु दिखावे व सामाजिक स्तर को उठाने का माध्यम है। चाहे फिर धर्म, दर्शन की पुस्तकें खोखले ही क्यों न हों। लोगों को तो दिखाने मात्र तक ही उन खोखलों की उपयोगिता है।

कमल कुमार के कथा साहित्य में किस प्रकार आर्थिक समस्या को स्पष्ट किया गया है। उनके लेखन में अर्थ से जूझता आम व्यक्ति अपने घर परिवार को चलाने के लिये कितनी जद्दोजहद करता है। ऊपर से इन उच्च वर्ग के द्वारा शोषण का शिकार भी बनते हैं। इन्होंने अपने कथा साहित्य में उच्च वर्ग की ज्यादती का शिकार हो रहे निम्न वर्ग के शोषण का बयान करते कई संदर्भ दिये हैं। पूँजीपति वर्ग मजदूरों का शोषण करके ही बहुमंजिला ईमारतों का निर्माण करता है। 'पहचान' कहानी संग्रह की 'शायद' कहानी में उच्च वर्ग का प्रतीक बहुराष्ट्रीय कंपनी का मालिक अपने कर्मचारियों को कई कई महीनों की तनख़्वाह नहीं देता है। अपनी समस्या बताती हुई अंजलि कहती है - "आपको उस दिन मैंने अपनी कंपनी वालों के भ्रष्टाचार और ज्यादती के बारे में फोन पर बताया था। असल में मैं इसी सिलसिले में आई हूँ। कैसी अंधेरगर्दी है। पाँच महीने से तनख्वाह नहीं दी है। आज के जमाने में कैसे जिए आदमी और करे भी तो

क्या.......।"[17] कंपनी वालों द्वारा मेहनती आदमी की पगार रख कर उसके साथ शोषण किया जाता है।

3.2.1 निम्न-मध्य वर्ग की समस्या

मध्यम वर्ग, उच्च वर्ग, और निम्न वर्ग के मध्य आने वाला वर्ग है। मध्य वर्ग में नौकरीपेशा वर्ग, बुद्धि प्रधान वर्ग, शिक्षक, क्लर्क, छोटे उत्पादन, दुकानदार आदि आते हैं। मध्यवर्गीय लोगों में ऐसी कई आकांक्षायें पलती हैं जिन्हें ये हासिल करना चाहते हैं। कमल कुमार के कथा साहित्य में मध्यम वर्ग के परिवारों का चित्रण उच्च और निम्नवर्ग के मुकाबले थोड़ा कम हुआ है। मध्यम वर्गीय लोग अपने भीतर कई आकांक्षायें पालते हैं उनकी चाहत होती है कि उन इच्छाओं की पूर्ति की जा सके। मध्यम वर्ग को कमल कुमार के उपन्यासों में उच्च वर्ग के मुँह से गाली के रुप में प्रयोग किया गया है।

'परिणति' कहानी में निम्न मध्यवर्गीय परिवार की झांकी प्रस्तुत की है। परिवार का चित्रण - "छतपर मेरी तरह तीन दिन से रुका पंखा, दीवार के साथ मेज पर नलिन की बिखरी किताब - कापियां। दीवारों की खुटियों पर टंगी नलिन की और मेरी धुली–अनधुली बुशर्टें और पैंटें। एक आध मां की छटी और चुनी धोती भी। दीवारों पर से जगह-जगह उतरा पलास्टर और टूटा फर्श ताक पर मां द्वारा चढ़ाये गये एक आध ताजा फूल और धूप से पूजित पिताजी की हंसती हुई फोटो एक विद्रूप स्थिति उत्पन्न कर रही थी। कोने में बड़े पर छोटा और उस पर उससे छोटा पुराने ट्रक और सबसे ऊपर आज के जमाने का नलिन का एयर बैग।''[18] एक ओर जहाँ उच्च वर्ग के पालतू पशु तक ऐश की जिन्दगी एयरकंडीशन कमरों में बैठकर गुजारते हैं। वहीं पर आज निम्न मध्यवर्गीय परिवार नाममात्र सुविधाओं के साथ अपनी जिन्दगी बसर करता है। मध्यवर्गीय लोग सारी जिन्दगी पिसते रहते हैं। उनकी किस्मत में ताउम्र 'कोल्हू के बैल' की तरह

गृहस्थी में जुटे रहना ही लिखा है। 'कोल्हू के बैल' कहानी में नायिका मध्यम वर्ग से जुड़ी है। यहाँ पर हर समय जोड़-तोड़ ही की जाती है। "ऊमा का स्थान उसने ले लिया था। फर्क इतना था वह सिर्फ घर संभालती थी और वह घर और दफ्तर दोनों। मध्यम वर्ग के अभिशाप होने का खोल उसने चढ़ा लिया था..... सालों साल गुजरते गये थे।"[19] मध्य वर्ग गृहस्थी के चक्कर में सारी जिंदगी मेहनत करता रहता है और जब तक जिन्दा रहता है यह सारे काम भी चलते रहते हैं।

वहीं निम्न वर्गों में सबसे निचले क्रम पर निम्न वर्ग विद्यमान है। निम्न वर्ग में खेतीहर मजदूर घेरलू नौकर आदि शामिल हैं। आर्थिक अभाव के कारण उनका जीवन निम्न स्तर का होता है। मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में ही सारी जिन्दगी गुजार देते हैं। कमल कुमार ने निम्न वर्ग की हालत और पीड़ा को समझते हुये उसकी मार्मिक अभिव्यक्ति की है। निम्न वर्ग के अभावों में जी कर अपने आने वाले कल की बजाय आज की जरूरतों पर ही ध्यान केंद्रित करता है। जीवन और सपरिवार रोजी-रोटी का जुगाड़ करता निम्न वर्ग अभावों में जीवन व्यतीत करता है। सारी जिन्दगी मूलभूत जरूरतों को पूरा करने में ही लगे रहते हैं। 'पहचान' कहानी-संग्रह की 'समय–बोध' कहानी में निम्नवर्गीय परिवार का चित्रण लेखिका ने खींचा है। "बापू को जो मर कर मुक्त हो गया था और माँ के लिये छोड़ गया था चार खाली पेट भरने को। काम करने वाले हाथ जो खेतों में अनाज उगाते नहीं थे। पिता जी को मरे पांच महीने हो गये थे। अनाज के सारे मटके खाली हो गये थे। मां दिन भर दूसरों के खेतों में काम करती। मां के पीछे वह और उसके पीछे पार्वती और लीला होती। जो कुछ मिलता उससे मुश्किल से पेट भरता।"[20] निम्न वर्ग के घरों की हालत इस कद्र बुरी हो जाती है कि उनके फाके के दिन शुरू हो जाते हैं।

निम्न वर्ग के पास जो भी कुछ है उसे बेचकर कमाने का ज़रिया ढूँढने की कोशिश करता है। रामदीन भी पत्नी के गहने बेचकर कमाई का साधन बनाने की कोशिश करता है। रामदीन

का बेटा स्कूल से आकर पिता के काम में उनकी मदद करता है। ‘‘राम दीन का लड़का पप्पू स्कूल से लौटता तो बाप की मदद करता। बरतन साफ करता, बाजार से सौदा लाता। छोटे-मोटे अनेक काम निपटा देता।"[21] सपरिवार मिलकर आर्थिक अभावों की पूर्ति करने में जुट जाता है ताकि उनके हालात सुधर सकें। निम्न वर्ग की औरतों द्वारा अपने बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के लिये रोज़गार की तलाश की जाती है। रोजगार की सहायता से बच्चों व घर के लिये पेशा मुहैया किया जाता है। 'घर - बेघर' कहानी - संग्रह की 'पालतू' कहानी में शकुंतला काम की तलाश में घर से निकलती है। "यह शकुंतला है, इसे चार-पांच घंटों का कोई काम चाहिये। घर में पैसे की ज़रूरत है पर छोटे-छोटे बच्चे हैं। सारा दिन नहीं रूक सकती।[22] घर की ज़रूरतें औरतों को घर से बाहर काम के लिये आने को मजबूर करती है। क्रमशः कहानी-संग्रह की 'औरत और पोस्टर' कहानी में निम्न वर्ग की बस्ती में गुजर-बसर करने वाले बच्चे घर व परिवार की जरूरतों के लिये मज़दूरी करते हैं। "अब तो मैं नौकरी करता हूँ।”

....

"पिच्चर हॉल के सामने पंजाबी के होटल में आन्टी जी।”

....

"मेरी कमाई से माँ हम छ: जनों का पेट भरती है। "[23]

निम्न वर्ग में जी रहे लोग अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिये सपरिवार संघर्ष करते हैं। अपनी रोटी, कपड़ा, मकान जैसी ज़रूरतों को पूरा करने के लिये माता- पिता, बच्चे सब काम में जुट जाते हैं। प्रस्तुत कहानी में छोटा बच्चा पढ़ाई छोड़कर घर के सदस्यों का पेट भरने की ख़तिर काम करता है

3.2.2 आर्थिक अभाव की समस्या

निम्न वर्ग के लोगों को अर्थ की व्यवस्था करना बहुत मुश्किल होता है। लेखिका ने इसी अर्थ की कमी के कारण जिन मुश्किलों का सामना निम्न वर्ग को करना पड़ता है और उससे उनके जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है। इसका वर्णन बखूबी करती हैं। 'पासवर्ड', उपन्यास में लेखिका बताती हैं कि दिल्ली में गर्मी से हाल बेहाल हो रहे हैं जिनके पास सुविधायें है वो आसानी से जिन्दगी जी रहे हैं किन्तु जिनके पास साधन नहीं है उनका जीवन मुश्किल से कटता है।

"आज कल यहाँ खूब गर्मी है। हम कुछ किस्मत वालें हैं हमारे पास सुविधायें है लेकिन सबके पास तो नहीं होती न खबरे छपती हैं, गर्मी से इतने लोग मर गये, कैसा अजीब लगता न सुनकर ।'[24] 'पासवर्ड' उपन्यास में गर्मी से जान जा रही है 'मैं घूमर नाँचू' में राजस्थान में सूखे से हालात ऐसे बन गये हैं कि कृष्णा और उसके पिता को घर-बार बेचकर पलायन करना पड़ा। सूखे के कारण निम्न वर्गीय लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हुआ। सूखे से लोगों की जान जा रही थी। पर सूखे से बड़े अमीर घरानों में कोई फर्क न पड़ता था। लेखिका, ठाकुरों के परिवार का जीवंत चित्रण करती हुई कहती है। "ठाकुर की मौत का सूखे से कोई मतलब नहीं था। मौत के जश्न का जैसे ठाकुर के बेटे शेरू की मौत से कोई मतलब नहीं था। पर गाँव में तो सूखे से मौतें हो रही थीं।"[25] गरीब, निम्न वर्ग यहाँ पर पैसे की कमी के चलते मौत के मुँह में पहुँचता है वहीं अमीर वर्ग पर आस-पास के हालातों से कोई फर्क नहीं पड़ता। कमल कुमार पैसे के अभाव में निम्न वर्ग के लोगों को देह के धंधे से पैसा कमाते हुये भी देखती हैं। 'पासवार्ड' उपन्यास में सिंगापुर के संदर्भ में यह देखने को आता है। "ये लड़कियाँ धंधे में थीं। उन्होंने बताया था कि हमारे घर में आर्थिक समस्या थी। इसलिये हम यहाँ आई हैं। दो-तीन साल पैसे कमाकर लौट जायेंगी।"[26] निम्न वर्गीय लोग पैसों की खातिर शरीर तक बेचने को तैयार हो जाते हैं और ऐसे

उदाहरण हमें हर देश में देखने सुनने को मिल जाते हैं। निम्न वर्ग अभावों की कमी से जूझता है उसके पास जिन्दगी को बेहतर ढंग से जीने के लिये संसाधनों व सुविधाओं की कमी होती है।

निम्न वर्गीय मजदूर अपने हक के लिये विद्रोह भी कर देते हैं। 'वैलेन्टाइन डे' कहानी-संग्रह की 'फॉसिल' कहानी में मज़दूर अपने साथ मज़दूरों के खदान में दबकर मरने की वजह से उनके हक की खातिर विद्रोह करते हैं। "हम श्रमजीवी खदान मज़दूर हैं। मालिक से मुआवजा लेंगे। हमारे मज़दूर खदान में दबकर मर गये। उनका मुआवजा नहीं दिया। अब हम हड़ताल करेंगे ..... घन्नी और उसका आदमी दोनों दब गये, उसके लड़के को मुआवजा मिलेगा। मीना की औरत को मिलेगा।"[27] आज मज़दूर अपने हक के लिये जगरूक हुए हैं। उसके लिय विद्रोह भी कर रहें हैं। कमल कुमार के कथा - साहित्य में भी समाज में जाति, प्रजाति, रंगभेद, लिंग, भाषा व अर्थ के कारण समाज के लोगों में पाये जाने वाले भेदभाव को दर्शाता है। छुआछूत, रहन-सहन, के आधार पर भेदभाव होना और सरकारी योजनाओं से वंचित होने वाले दलित शोचनीय दशा में रहते हैं। नीग्रो खस्ता हाल बस्तियों में गुलामी का जीवन ढोते हैं। जिनमें आज जागरूकता आई है। जिससे उनके रास्ते खुलते जा रहे हैं। रंगभेद के आधार पर समाज में आज भी गोरे-काले का भेद समाज में उसकी प्रस्थिति को निर्धारित करता है । लिंग आधारित भेदभाव लड़कियों के साथ जन्म से मौत तक समाज में जो भेदभाव होता चला आया है उसका तीखे शब्दों में विरोध करता है। अपनी भारतीय भाषाओं को अंग्रेजी के मुकाबले कमतर आंकते लोंगों की मानसिकता नज़र आती है।

इस तरह कमल कुमार के कथा साहित्य में आर्थिक समस्या के कारण उच्च, मध्यम व निम्न वर्गीय लोगों का जैसा जीवन स्तर होता है और शोषक वर्ग कैसे शोषितों का खून चूसता है। इसे लेखिका के साहित्य में अन्याय की पराकाष्ठा के नज़रिये से चित्रित किया गया है। समाज के सभी स्तरों व वर्गों में विभाजन हो जाना राष्ट्र की एकता को ठेस पहुँचाता है। समाज में जितने

भी स्तर बनाये गये हैं उनमें पाये जाने वाली स्तरीकरण को खत्म कर सामाजिक एकता का प्रयत्न किया जा सकता है । लेखिका सभी स्तरों व वर्गों में विभाजित लोगों व भाषा के प्रति अपना नज़रिया बताती हुयी उन सभी के हक में खड़ी होती हैं जिन्हें समाज में निचले पायदानों पर रखा गया है।

3.2.3. बेरोजगारी की समस्या

आज बेरोजगारी की समस्या से युवा वर्ग पीड़ित है। दिनों-दिन महंगाई का विकराल रूप समाज पर आतंक जमाता चला जा रहा है। इस महंगाई एवं बेरोजगारी की स्थिति में मध्यमवर्गीय जीवन अशान्ति, अस्थिरता एवं असंतोष का अनुभव कर रहा है। कभी-कभी युवा वर्ग दिशाहीन भी हो जाता है, जिसका दुष्परिणाम सम्पूर्ण समाज को भुगतना पड़ता है। आज का युवा वर्ग नौकरी न मिलने के कारण कई बार तो कोई अन्य कार्य करने के लिए तैयार भी हो जाता है लेकिन उसके माँ-बाप चाहते है कि वह कोई और कार्य न करके सरकारी नौकरी ही करे। अगर देखा जाय तो प्रत्येक व्यक्ति की कोई न कोई मजबूरी है। तभी तो वह विदेशों की ओर पलायन कर रहा है। 'हैमबरगर' उपन्यास का सुरीन्द्र आई0आई0टी0 में इंजीनियर है। भारत में बेरोजगार होने के कारण वह पैसा कमाने के लिये अमेरिका चला जाता है, उसी के शब्दों में "चार छः साल बाद लौट आऊगाँ, थोड़ा पैसा कमालूँ।[28] हैमबरगर उपन्यास का सुरेन्द्र यहाँ पैसा कमाने के बाद भारत लौटना चाहता है, ठीक वैसे ही परिन्दे कहानी का रमेश भी पैसा कमाने के बाद ही भारत आना चाहता है ।

मुख्य रूप से देखा जाय तो गरीबी और बेरोजगारी के कारण भी कई महिलाएँ स्वेच्छा से भी इस धन्धे में प्रवेश कर रही हैं। थाईलैण्ड में तो वैश्यावृत्ति कानून से स्वीकृत है । इस धन्धे में लड़कियों का हर महीने मेडिकल होता है और इन्हें लाइसेंस दिया जाता है। बड़े-बड़े कई तरह

के मसाज हाउस हैं। मसाज तो बहाना है। हर तरह के देह सुख और बदमाशी का एक अड्डा है यह पुरूषों के लिये। यहाँ पुतलों के स्थान पर असल में लड़कियाँ खड़ी होती हैं इसमें ग्राहक अपनी मनपसन्द लड़की का चुनाव कर सकता है। डॉ० कमल कुमार ने विदेशों में अनेक यात्राएँ की हैं। थाईलैण्ड में उनकी दो लड़कियों से बात भी हुयी है जो इस धन्धे में हैं। उन्हीं के शब्दों में- "हमारे घर में आर्थिक समस्या थी इसलिये हम यहाँ आई हैं। दो तीन साल पैसे कमाकर लौट जायेंगे, लेकिन क्या सभी लड़कियां ऐसा करती है। नहीं, जो भाग्यशाली होती है वही। वैसे हमारे समाज में हमें वापिस जाने में इतनी परेशानी नहीं होती है। हमें स्वीकार कर लिया जाता है, लेकिन इस तरह की जिन्दगी जो हमें जीनी पड़ती है, उससे हम जल्दी ही कमजोर और बीमार हो जाती हैं। कई तरह की बीमारियों से ग्रस्त | सारे बचाव के बाद भी एड्स का खतरा होता है। मैंने जाना था मूल कारण था गरीबी, यें लड़कियां जो छोटे गाँव से आती हैं या लाई जाती हैं इस धन्धे में। एक बार इस धन्धे में आने के बाद आगे क्या होगा, कोई कुछ कह नहीं सकता।"[29]

बेरोजगारी की समस्या और आर्थिक समस्या ये दोनों ही मानव को कुकृत्य करने पर विवश कर देती हैं। वेश्याओं की वास्तविक स्थिति पाठक को अन्दर तक हिलाकर रख देती हैं। वह यह सोचने पर विवश हो जाता है कि आखिर वह किस तरह का जीवन जी रही हैं। लेखिका की मुलाकात विदेश में नेपाली लड़के से हुई, जिसने उसे बताया कि यहां पर कुंवारी लड़कियों की बात ही नहीं, बल्कि शादीशुदा और बाल बच्चों वाली औरतें भी इस धन्धे में लगी हुई हैं। उसी लड़के के शब्दों में "ये लड़कियां दूर गाँवों से आती हैं, गरीब परिवारों की होती हैं। यहां कमाई करती हैं। आसपास के गांवों से कुछ लड़कियों के पति भी उन्हें शाम को छोड़ देते हैं। घर में उनके बच्चे भी होते हैं। परिवार होता है। सुबह वे खुद चली जाती हैं या उन्हें उनके परिवार से कोई सदस्य या पति ले जाते हैं। लड़कियां पैसा अपने घर भेज देती हैं। हां यह बड़े-छोटे मसाज हाउस वाली लड़कियां भी ग्राहकों के साथ चली जाती हैं। जल्दी और ज्यादा पैसा कमाने

का यह एक तरीका है। बाहर से 90 प्रतिशत टूरिस्ट आता ही इसलिये है। नहीं, यहां कोई किसी को कुछ नहीं कहता। जो होता है, अपनी मर्जी से होता है कोई जोर जबरदस्ती नहीं होती।"[30] यहाँ पर वेश्याओं को देह व्यापार करने के लिये लाइसेंस मिले हुये हैं। वह यह धन्धा करके पैसा कमा सकती हैं। लेखिका बैंकाक के विषय में बताती हुयी कहती हैं कि "वहाँ पर शो केस में पुतलों की जगह सच में लड़कियां खड़ी की जाती हैं। ग्राहक उनका चुनाव कर सकता है इतना ही नहीं टी०वी० की स्क्रीन पर उनके स्त्री अंगों को दिखाया जाता है और अपनी पसंद से पुरूष उनका चुनाव कर सकता है। मैं थोड़ा जोखिम उठाकर वहां काम कर रही दो लड़कियों से मिली। उनका कहना था गरीबी ही इसका मूल कारण था। छोटे-छोटे गांवों से गरीब, बेहाल परिवारों की लड़कियाँ वहां आ जाती हैं बाजार में। कई उनमें से पैसा कमाकर लौट भी जाती है। उनका समाज उन्हें स्वीकार कर लेता है, लेकिन सबके साथ ऐसा नहीं होता। अधिकतर बीमारी से ग्रस्त हो जाती हैं या इन लोगों के चंगुल से मुक्त नहीं हो पाती। अपनी दर्दनाक दास्ता सुनाई थी उन लड़कियों ने।"[31] इस तरह से ये अभागी लड़कियाँ एक ही दिन में अनेकों भेड़ियों से मुकाबला करने के बाद अपने पेट की अग्नि को बड़ी मुश्किल से शांत कर पाती हैं। अगर देखा जाये तो वेश्यावृत्ति के उपजने का मुख्य कारण कहीं न कहीं गरीबी एवं बेरोजगारी की समस्या है। फिर ये वेश्यायें चाहें थाइलैण्ड की हो, चाहे बैंकाक की हो या पेरिस की।

3.3 धार्मिक समस्याएँ

भारत एक ऐसा देश है जहाँ अधिकांशतः धर्म ही आचार-विचारों को संचालित करता आया है। प्रत्येक युग के इतिहास में इस बात का परिचय मिलता है कि भारतीय संस्कृति में ईश्वर में विश्वास, कर्मफल में विश्वास, पुनर्जन्म में विश्वास, यहाँ तक कि वर्ण भेद को भी धार्मिक ग्रन्थ ही प्रचारित करते रहे हैं। वस्तुतः मनुष्य जीवन के साथ धर्म, उसी समय जुड़ गया था जब मनुष्य अभी अपनी सभ्यता की यात्रा के प्रारंभिक चरण में ही था। किसी भी संस्कृति के धार्मिक पक्ष

वहां के लोगों के मनुष्य तथा उनकी ईश्वर के प्रति आस्था पर निर्भर करता है। धर्म के मार्ग में मात्र आस्था ही ऐसा सम्बल है जो निरन्तर व्यक्ति को आत्मबल प्रदान करती है। इसी के बल पर वह अपनी जीवन यात्रा सम्पन्न करता चलता है। अपनी दैनिक जीवन की छोटी से छोटी कठिनाई तथा घटना को आस्था के नाम पर ईश्वर को समर्पित करता है। इसी प्रकार अपनी उपलब्धियों के लिये भी वह परमात्मा की कृपा-दृष्टि को आधार मानकर चलता है। इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि सभी धर्म मानवीय समता, निःस्वार्थ त्याग और आदर्श की भावना पर जोर देते हैं किन्तु कभी-कभी अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ कहने से भी नहीं चूकते । परिणामतः दो धर्मों में संघर्ष छिड़ जाता है। जबकि कोई भी धर्म बड़ा या छोटा नहीं होता है। चूंकि धर्म के संचालक पुरोहित धार्मिक उन्माद पैदा करने के लिये धार्मिक आस्थाओं में खण्डन–मण्डन की प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं और मजहब की धार्मिक कट्टरता से हिन्दू-मुस्लिम के सम्बन्ध एक दूसरे के प्रति विषाक्त हो गये थे। डॉ० राजपाल शर्मा के अनुसार "शाह औरंगजेब ने मंदिरों के देशव्यापी भूसातीकरण का फरमान निकालकर असंख्य मंदिर गिरवा दिये थे । हिन्दुओं पर महंगे तीर्थ कर और जजिया लगाकर उन्हें परोक्ष रूप से हिन्दू धर्म छोड़ने के लिये विवश किया था तथा बहुत से हिन्दू बलात मुस्लिम बना लिये गये थे। इसकी प्रतिक्रिया में कुछ हिन्दू नरेशों ने भी मस्जिदें नष्ट करने का बीड़ा उठा रखा था ।"[32]

ठीक इसी प्रकार अंग्रेजों ने किया । हिन्दू मुस्लिम संघर्ष को बढ़ावा देने और फूट डालने के लिये गाय और सूअर की चर्बी वाले कारतूस मुँह से खोलने के लिए दिये जिसका रहस्य खुलने पर अंग्रेज अफसरों पर गोलियाँ चली। 1857 की क्रान्ति स्वतत्रंता संग्राम बन कर उभरी। इससे पूर्व मध्यकाल में धार्मिक रूढ़ियाँ अन्धविश्वास, जातिगत भेदभाव, जादू-टोना, झाड़-फूंक और बलि प्रथा जैसी कुरीतियाँ हमारे समाज में घर कर चुकी थीं जिनके निवारण के लिये समाज सुधारकों ने पुरजोर कोशिश की । ईसाई मिशनरियों का योगदान भी सराहनीय रहा इन्होंने जनता

को शिक्षित किया, स्कूल खोले, शिक्षा के प्रचार-प्रसार से भारत में शिक्षित वर्ग तैयार हुआ जिन्होंने व्यापक मानव धर्म पर जोर दिया। साहित्य धार्मिक जीवन की उठा-पटक से अछूता नहीं रह सकता क्योंकि भारतीय समाज का आरम्भ ही धर्म-प्रेरित रहा है।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में भी धर्म-विषयक लोगों की आस्था / मान्यता ज्यों की त्यों है। क्योंकि यह भारतीय संस्कृति की जड़ों में रसी-बसी वह खुराक है जिस से समाज प्रभावित हुये बिना नहीं रह सकता। आधुनिक युग की आधुनिक विचार सम्पन्न लेखिका कमल कुमार ने अपने कथा साहित्य में अंध धार्मिक उन्माद के चलते समाज में फैली कुरीतियों का चित्रण किया है। क्योंकि ये हमारे समाज को अन्दर ही अन्दर खोखला किये जा रही है। पीढ़ी-दर-पीढ़ी उनका पालन किया जा रहा है। इनके अनुसार जो धर्म मनुष्य की अवहेलना करें वह धर्म है ही नहीं, ढोंग है।

3.3.1. धार्मिक मान्यताओं का विवेचन

भारत एक धर्म–निरपेक्ष देश है। यहाँ पर हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई विविध धर्मों के लोग रहते हैं। सभी धर्म के लोगों में अपने धर्म के प्रति विशेष आस्था होती है। इसी के चलते लोग रोज़ा, व्रत-नियम आदि में भी विश्वास करते हैं और स्त्रियां प्रायः इन विश्वासों की गिरफ्त में अधिक होती हैं। वह अक्सर बच्चों के भविष्य को लेकर चिन्तित रहती है। संतान के लिये कई-कई दिन भूखे रह सकती हैं। यही नहीं इससे अधिक करने को सदैव तैयार रहती हैं। 'आवर्तन' उपन्यास में मीरा रामचन्द्रन एक विदेशी शोध छात्रा है। वह भारतीय एवं पाश्चात्य समाज के तुलनात्मक अध्ययन पर शोध कर रही है और सामग्री संकलित करने के लिये भारत आती है। उसे भारतीय पर्व, त्यौहारों, व्रतों आदि के विषय में विस्तार पूर्वक जानने की आवश्यकता है। वह अपने निदेशक (अमर) की पत्नी (पार्वती) से संकष्टी चौथ के व्रत के महत्व के विषय में

पूछती है, तभी वह उसे बताती है- "यह व्रत मीरा बीबी, बच्चों के कष्ट दूर करने के लिये रखा जाता है और इसमें श्रीगणेश की पूजा की जाती है क्योंकि गणेश हमारे संकट मोचन देवता हैं।[33]

भारतीय संस्कृति में यह सोच सदियों से चली आ रही है कि माँ अगर संकष्टी चौथ का व्रत रखती है तो बच्चों के सारे कष्ट दूर हो जाते हैं। सदियों का यह विश्वास खत्म न होकर आज भी औरत के भीतर जगह बनाये हुये है। क्योंकि भारतीय स्त्री अपने बच्चों के भविष्य के लिये सदैव आशंकित रहती है। मध्यकाल से ही शिव का व्रत अर्थात् शिवरात्री का पर्व भी बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता है। इसे अपने पाप को समाप्त करने तथा अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिये रखा जाता है। वह स्वयं भी शिव का व्रत रखे हुये है और पूजा के लिये लाई गई सामग्री के विषय में मीरा रामचन्द्रन को संकेत करके बताती है - "यह सब भगवान शिव की पूजा के लिये है। बेलपत्र है, फल और यह दूध है। दूध शिवलिंग पर चढ़ाया जाता है।"[34]

अध्ययन चूंकि भारतीय और पश्चिमी समाज का था। अतः भारतीय समाज की उक्त मान्यता से शोधार्थी को परिचित करवाना जरूरी था, अतः उसे परिचित करवाने के साथ-साथ व्यवहारिक रूप देने के लिये वह शालिग्राम भेंट करती है - "मीरा बीबी इस शिवलिंग को आप रख लो। भगवान शिव की पूजा करेंगे तो मनचाहा पति मिलेगा।"[35] यह भारतीय मानसिकता ही है कि भगवान शिव का व्रत करने से मन चाहा पति मिलता है। इसी सोच के चलते अक्सर लड़कियाँ सोमवार का व्रत रखती हैं और भगवान शिव से मनचाहा पति प्राप्त करने की कामना करती हैं। हिन्दू समाज में ही नहीं बल्कि मुस्लिम समाज में भी पर्व त्यौहारों को बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता है। मुस्लिम समाज में बकरीद, हजरत इब्राहिम की स्मृति में मानया जाने वाला त्यौहार है, जिसमें सभी सगे सम्बंधी इकट्ठे होते हैं यह भारतीय त्यौहारों का आकर्षण ही है जो देश - विदेश से सब घर की तरफ लौटते हैं। ईद तो सभी इस्लामिक देशों में हर्षोल्लास से मनाई जाती है किन्तु भारत का व्यक्ति इसे अपने ही घर में मनाने की चाहत रखता है।

यह हमेशा इस बात पर जोर देती है कि दो धर्म एकत्र नहीं रह सकते। अतः इस समस्या पर गंभीर विचार विश्लेषण करते हुये लेखिका समाज में फैले इस विष को खत्म कर लोगों में स्वस्थ सोच का निर्माण करना चाहती हैं।

3.4. राजनीतिक समस्या

हमारी आज की सबसे बड़ी बिडम्बना यह है कि हमारा देश आजाद है और देश की जनता गुलाम है। हमारे यहाँ विश्व का सबसे बड़ा प्रजातंत्र है लेकिन जनता की कोई सुनवाई नहीं, जनता अनाथ है। प्रजातंत्र मात्र तंत्र बन गया है। प्रजा उससे कोसों दूर है। यह सारा करिश्मा हमारी आज की राजनीति का है। जब देश पराधीन था, राजनीति देशभक्ति का दूसरा नाम थी, देश आजाद हुआ और राजनीति देशद्रोह जनद्रोह का संवैधानिक 'धंधा' बन गयी। जन सेवा, देश की दुहाई देते हुये कुर्सी पाने, कुर्सी हथियाने, प्राप्त कुर्सी को बनाये रखने और कुर्सी की सहायता से अपने तथा अपनों के लिये धन, सम्पदा, ऐश्वर्य बुद्धि का निरन्तर निर्मम अंधा खेल राजनीति बन गयी। सत्ता पाने और भोगने की अनैतिक हरकतों को राजनीति कहा जाने लगा। आजादी से पूर्व हमारी मनोकामना समाजवादी राज्य व्यवस्था स्थापित करने की थी लेकिन आजादी मिलने के बाद भी स्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। आम जनता आज भी भूखे पेट दिन काट रही है। कीड़े-मकोड़ों के समान जीवन जीने के लिये विवश हो गयी है। भारतीय आम जनता को राजनीतिक कुचक्रों ने इतनी बार छला है कि वह भी किसी राजनीतिक दल या राजनेता पर विश्वास करने को तैयार नहीं है। राजनीतिज्ञों की घोषणाओं से तो लगता है, जैसे समाजवाद का सपना शीघ्र ही साकार होने वाला है और आम जनता की माली हालत सुधरने में देर नहीं है |

वस्तुतः इन आर्थिक घोषणाओं को सही तरह से लागू नहीं किया जाता और आम जनता की आर्थिक स्थिति बद से बदतर होती चली जाती है। सरकार आम जनता को उचित मूल्य पर वस्तुएँ उपलब्ध करवाने के लिये कंट्रोल की घोषणा करती है। लेकिन घोषणा के पहले ही सरकारी दुकानों से वस्तुएँ गायब हो जाती हैं और काले बाजार में और ऊँचे दामों में बिकने लगती हैं। व्यापरियों और सरकारी व्यवस्था की मिली भगत के कारण सारी घोषणायें आम आदमी के लिये वरदान के बजाय अभिशाप सिद्ध होती है। सरकार बजट बनाती है और बजट की घोषणा से पूर्व ही बाजार से सामग्री गायब हो जाती है। अगर मिलती भी है तो काफी ऊँची कीमतें देने पर ही। सरकारी बजट आम आदमी की स्थिति को बदतर करता है। महंगाई से आम आदमी की कमर टूट रही है और व्यापारियों की दिन दुगनी रात चौगुनी तरक्की हो रही है । आज राजनीति में भी नियम कानून पूँजीवादी शोषक व्यवस्था के हित में होते हैं और इनका पालन पुलिस, सेना और न्यायलायों द्वारा किया जाता है। पुलिस सेना और न्यायालय शोषक वर्ग के हित साधन के लिये बने हैं और शोषित का शोषण करने में व्यवस्था के सहयोगी हैं। जनता मात्र सहने का काम करती है।

भ्रष्ट शासनतंत्र एवं वर्तमान समय में न्याय व्यवस्था पर राजनीति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। राजनीति ने न्याय व्यवस्था में अपनी जड़े मजबूत की है। इसलिये तो न्यायालय के अधिकतर फैसले राजनीति से प्रेरित रहते हैं। निरपराध व्यक्तियों को अपराधी साबित कर दिया जाता है और अपराधी बाइज्जत रिहा हो रहे हैं। न्यायाधीश किसी न किसी राजनीतिक दल से जुड़े होते हैं। इसी कारण वह राजनेताओं को गुनाहगार होने के बावजूद भी सजा नहीं दिलवा पाते। 20वीं शती का नौंवा दशक घोटालों और घपलों का दशक माना जाता है। इस दशक में राजनेताओं ने अनेक घोटाले किये पर आज तक किसी भी राजनेता को सजा नहीं हो पाई। 'यह खबर नहीं' उपन्यास में अमित खरे इन राजनेताओं द्वारा किये गये घोटालों के विषय

में बताता है कि- "सन् 1990 अगस्त में वीरेश प्रसाद सिन्हा का एक पत्र प्रधानमंत्री वी०पी०सिंह के नाम समाचार पत्रों में छपा था। पत्र में कहा गया था कि आदिवासियों की विकास योजनाओं के लिये दिये गये 80-90 प्रतिशत धन पशु पालन विभाग के माफिया लूट रहे हैं, पर कुछ नहीं हुआ। आज देश एक खतरनाक मोड़ पर है। सभी राजनेता एक थैली के चट्टे-बट्टे हैं। घोटाला में सभी शामिल हैं......... सन्तरी से मंत्री तक। अपने भ्रष्ट कारनामों और भ्रष्ट कार्यप्रणाली को बचाये रखने के लिये अपराध जगत का सहारा लेते हैं, इसलिये अपराधीकरण फैल रहा है।"[36]

न्याय प्रणाली के प्रति अविश्वास बढ़ता जा रहा है। न्याय के देवता को आसानी से बेचा खरीदा जा रहा है। सरकारी वकील आसानी से खरीदे जाते हैं अपराधियों को छुड़वाने के लिये राजनेता जजों पर दबाव डालते हैं। न माने तो उनके तबादले करवाये जाते हैं और तरक्कियाँ रूक जाती हैं। यह वर्तमान भारत की सही तस्वीर है। जिसमें न्यायाधीश तक राजनीति का शिकार हो रहे हैं। चारों ओर गुंडाराज तीव्रगति से पनप रहे हैं। बल्कि यों कहें कि आज जनता का राज न होकर गुण्डों का राज हो गया है। इन गुण्डों के लिये न तो कोई कानून है और न ही इन्हें पुलिस का डर। 'यह खबर नहीं' उपन्यास में पोस्ट ग्रेजुएट नेहा को नौकरी का झांसा देकर उसका बलात्कार किया जाता है। ऐसा घृणित कार्य करने वालों को पुलिस द्वारा कोई सजा नहीं दी जाती है। कमल कुमार के शब्दों में"राजनीतिक संरक्षण और दौलत के नशे में चूर नई सम्पन्न पीढ़ी का युवा वर्ग जिसके लिये औरत क्या है? उपभोग सामग्री। जिसे न समाज का डर है न कानून से। न पुलिस से। पुलिस उनकी रखैल है। कानून दलाल। इसलिये यह चलेंगे अपनी चाल।"[37]

वर्तमान समय में पुलिसकर्मी स्वयं गुण्डों के साथ मिलकर ऐसे कार्य करवा रहे हैं। अगर पुलिस इन गुण्डों को पकड़ कर कानूनी कार्यवाही करें तो ऐसे अपराधों में कमी आ सकती है।

पुलिस व्यवहार से त्रस्त आम जन से लेकर संवेदनशील साहित्यकार इस विभाग के कुकृत्यों का चिट्ठा खोलने के लिए सदैव तैयार रहते हैं। 'यह खबर नहीं' उपन्यास में कमल कुमार ने पुलिस की पाशविक व्यवहार को दर्शाया है। उपन्यास में शीला एक गरीब और शाम के समय लकड़ियाँ लेकर लौट रही होती है, पुलिस विभाग का एक सिपाही उसे यह कहकर थाने बुला लेता है कि "तुम्हारा पति थाने में है तुम्हें बुला रहा है।'[38] पुलिसकर्मी के मुख से इस तरह की बात सुनकर शीला का घबराकर थाने पहुँचना स्वाभाविक है। जब थाने में उसको अपना पति नहीं मिलता तो वह पुलिसवालों को उसके विषय में पूछती है लेकिन पुलिसवालों से जो उसे जबाव मिलता है वह उनकी बदतमीजी का द्योतक है— "हम ही तुम्हारे पति हैं।"[39]

इस तरह की भाषा अक्सर पुलिसकर्मी बोलते हुये देखे जाते हैं जो एक सभ्य नागरिक कतई सहन नहीं कर सकता। बात यहीं पर खत्म नहीं हो जाती, उसे कई दिनों तक थाने में रखा जाता है और पुलिस विभाग का प्रत्येक व्यक्ति उसके साथ कुकर्म करता है। जब उसका पति रणवीर उसे ढूंढता हुआ थाने पहुंचता है तो पुलिसकर्मी उससे खाली कागजों पर हस्ताक्षर करवाना चाहते है। जब वह नहीं करता तो उसकी पत्नी को उसके सामने लाकर उसका बलात्कार करते हैं। वह लाख चिल्लाता है कि वह उनको सजा दिलवायेगा। यह वह आक्रोश में कहता है। उसके आक्रोश का भी पुलिसकर्मी मजाक उड़ाते हैं- "यहाँ से छूटेगा तब ना।"[40]

जब पीटते-पीटते वह मर जाता है तब खाली कागजों पर उसका अंगूठा लगवाकर और रात में उठाकर गांव से बाहर फेंक आते हैं। यह हिंसात्मक प्रवृत्ति किसी एक पुलिसकर्मी से नहीं बल्कि लगभग पुलिसकर्मी इसी प्रवृत्ति के हैं। किसी भी बेकसूर व्यक्ति को थाने लाना और उस पर अपराधी होने का मुकदमा चलाना और यदि स्त्री है तो अभद्र भाषा का प्रयोग यहाँ तक कि उसकी अस्मिता लूटना इनका रोजमर्रा का काम है। इस तरह की घटनायें हर दिन समाचार पत्रों की सुर्खियों में होती हैं। आज पुलिस थाने में कमाई के अड्डे बन गये हैं। घूस लेना और

अपराधियों से पकड़ी गई अवैध वस्तुओं की कालाबाजारी करने में भी इन्हें कोई हिचक नहीं। ‘यह खबर नहीं' उपन्यास में कमल कुमार ने शराब के अवैध धन्धे का चित्रण किया है। "शकूरपुर गांव में नकली शराब पीने से तीस लोग मर गये। गांव में हाहाकार मचा था । मीडिया भी इस खबर की बारीकियों पर नजर डाल रहा है। शराब कहां से आई थी, इस पर कई मृतकों ने मौत से पहले बयान दिये थे। शराब उन्होंने पुलिसवालों से खरीदी थी । उसे पता था अभी कुछ ही दिन पहले चौकी में अवैध शराब से भरा ट्रक पकड़ा गया था वह लाया गया था। जिसमें अंग्रेजी लेवलों वाली नकली शराब की लगभग सौ पेटियां थीं । यह शराब होली से एक दिन पहले गांव के लोगों को सस्ते दामों पर बेची गई थी । जब खबर फैली तो एस०एच०ओ० ने अवैध शराब का ट्रक पकड़े जाने से इंकार किया था । मगर माल गोदाम में 20 पेटी शराब बरामद भी हो गई थी। गांव वाले बार-बार कह रहे थे कि वे आमतौर पर पुलिसवालों से सस्ती शराब खरीदते ही रहते हैं। इसमें कोई नयी बात नहीं थी ।"[41] पुलिस का कार्य तो नशाखोरी को रोकना और स्वस्थ समाज का निर्माण करना है। किन्तु इसको बढ़ावा देने वाला ही पुलिस विभाग है। नशाखोरी को रोकने के लिये सरकार द्वारा अनेक तरह के कानून बनाये गये हैं सिर्फ उन पर चलने वाला कोई नहीं है। कानून का उल्लंघन करने वालों में आज संतरी से मंत्री तक शामिल होते है। तभी तो ऐसे गोरखधंधे दिन दुगनी रात चौगुनी उन्नति कर रहे हैं।

लेखिका ने अपने कथा साहित्य में पुलिस व्यवहार को बड़ी बारीकी से दर्शाया है। पुलिस विभाग का मुखौटा उतारकर असली चेहरा दिखाते हुये लेखिका इस विभाग में सुधार हेतु चिन्तित हैं।

ग्रंथ सूची

1. राम गणेश यादव, समाजशास्त्र परिचय, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड, हैदराबाद, 2014, पृ0 194।
2. एस०पी० गुप्त, जी०के० अग्रवाल, हिन्दी समाजशास्त्र की रुपरेखा, साहित्य भवन, आगरा, 1972, पृ० 131।
3. डॉ० गणेश दास, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में नारी के विविध रुप, पृ० 25।
4. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 175।
5. कमल कुमार, हैमबरगर, पृ0 131।
6. कमल कुमार, हैमबरगर, पृ० 136।
7. जय शंकर प्रसाद, ध्रुवामिनी, पृ0 34।
8. कमल कुमार, मैं घूमर नाचूँ, पृ0 87।
9. कमल कुमार, मैं घूमर नाचूँ, पृ0 16।
10. कमल कुमार, मैं घूमर नाचूँ, पृ० 112।
11. कमल कुमार, अन्तर्यात्रा, पृ0 155।
12. कमल कुमार, अपार्थ, पृ0 29।
13. कमल कुमार, अपार्थ, पृ0 65।
14. कमल कुमार, यादगारी कहानियां, पृ० 24।
15. कमल कुमार, पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1984, पृ0 73।
16. कमल कुमार, मैं घूमर नाचूँ, पृ0 23-24।
17. कमल कुमार, पहचान, पृ० 2।
18. वही, पृ० 68–69।

19. वही, पृ० 109।

20. वही, पृ0 88।

21. कमल कुमार, फिर वहीं से शुरु, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ0 100।

22. कमल कुमार, घर - बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, 2007, पृ0 107।

23. कमल कुमार, क्रमशः, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1996, पृ0 89।

24. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 59।

25. कमल कुमार, मैं घूमर नाचूँ, पृ0 42 26।

26. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 19।

27. कमल कुमार, वेलेन्टाइन डे, पृ0 12।

28. कमल कुमार, हैमबरगर, पृ0 32।

29. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 19।

30. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 30।

31. कमल कुमार, पासवर्ड, पृ0 116।

32. डॉ० राजपाल शर्मा, हिन्दी वीरकाव्य में सामाजिक जीवन की अभिव्यक्ति, पृ० 329।

33. कमल कुमार, आवर्तन, पृ0 84।

34. वही, पृ0 86।

35. वही, पृ0 86।

36. वही, यह खबर नहीं, पृ0 147।

37. वही, पृ० 129।

38. वही, पृ0 65।

39. वही, पृ0 65 ।

40. वही, पृ0 65 ।

41. वही, पृ० 61 ।